वनवासी कल्याण आश्रम

कार्य परिचय

स्नेहलता वैद

अखिल भारतीय
वनवासी कल्याण आश्रम
'कल्याण आश्रम', जशपुरनगर-४९६३३१, जि. जशपुर, छत्तीसगढ
दूरध्वनी : ०७७६३ २२०८८५

हमारी प्रेरणा

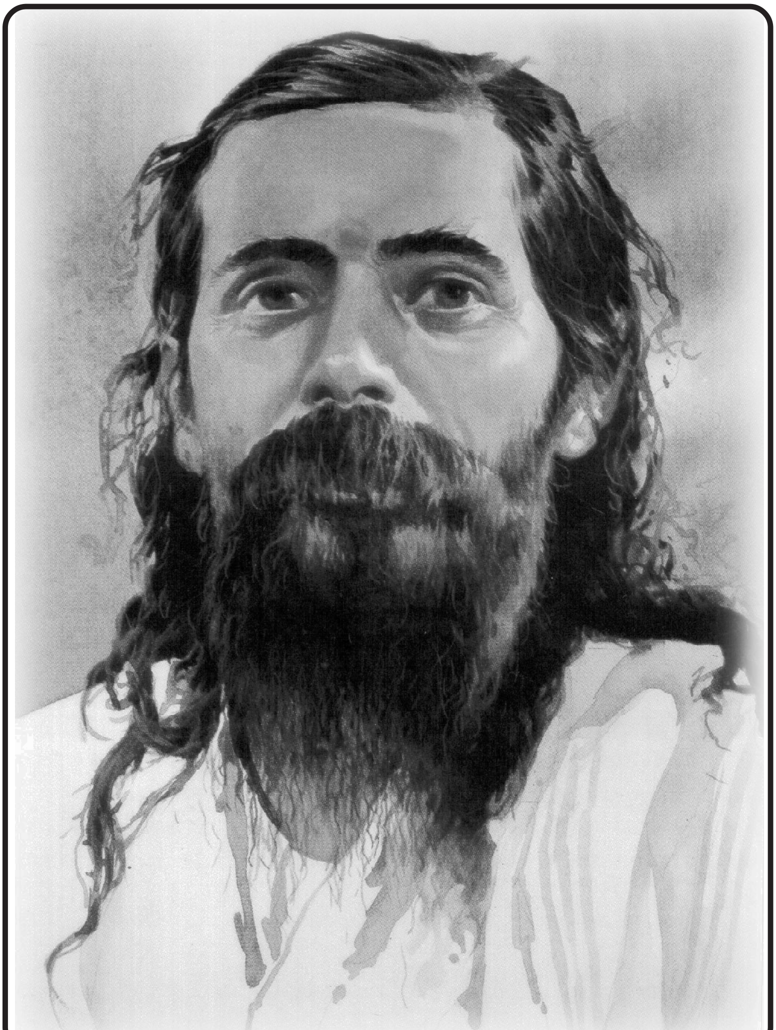

प. पू. श्री. माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर
(श्री गुरुजी)
द्वितीय सरसंघचालक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

समाज संगठन एक यज्ञ
सुदूर वनाँचल के गाँव में
समय के साथ
अनथक – अविरत चलते चलते
धूप – छाँव का अनुभव करते
एक कार्यकर्ता
चला रहा है, एक छोटासा प्रकल्प
यह प्रयास
मानो, 'यज्ञ' की एक समिधा
न पद की अभिलाषा
न अर्थ प्राप्ति की अपेक्षा
केवल समर्पण का असीम आनंद
वनवासी – नगरवासी
सभी के नि:स्वार्थ प्रयासों का परिचय करें
'कार्य परिचय' करें...

वनवासी कल्याण आाश्रम
कार्य परिचय
Vanvasi Kalyan Ashram
Karya Parichya

© सर्वाधिकार स्वाधिन

प्रकाषक :
अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम
‘कल्याण आश्रम’, जशपुरनगर-४९६३३१, छत्तीसगढ
दूरध्वनी : ०७७६३ २२०८८५

मुद्रक :
प्रिंट सर्व्हिसेस
www.printservises.in

अक्षर संयोजन :
आस्वाद प्रकाशन प्रा. लि.
aswadp@gmail.com

मुखपृष्ठ :
भरत परचुरे
yashad@rediffmail.com

प्रतियाँ : १००००

सहयोग : रु. २०/-

तिथि : स्थापना दिन २६ दिसम्बर २०११

प्राप्तिस्थान :
अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम
३५- चंचल स्मृति, ग. द. आंबेकर मार्ग, वडाला,
मुम्बई-४०० ०३१, महाराष्ट्र
दूरध्वनी : ०२२-२४१२९६४५ , फॅक्स : ०२२-२४ १३१९६९
ई-मेल : kalyanashram2010@gmail.com

मनोगत

अपने वनवासी बन्धूओं का सर्वांगीण विकास अपना लक्ष्य है। इस हेतु विविध प्रकल्प, विभिन्न उपक्रम एवं कार्यक्रमों के माध्यम से कार्य चल रहा है। सम्पूर्ण समाज के सहयोग से हम लक्ष्य प्राप्ति हेतु अहर्निश कार्यरत है। सन् १९५२ से प्रारम्भ हुए इस कार्य को आज साठ वर्ष पूर्ण होने को है। कार्य करते-करते हमने कई धूप-छाँव देखें। कार्यकर्ताओं के नि:स्वार्थ प्रयासों से अपने कार्य का सर्वदूर विस्तार होने के पश्चात भी आज बहुत कुछ करना शेष है। कार्यकर्ता इस हेतु सदैव प्रयत्नशील है।

कल्याण आश्रम न केवल एक पंजीकृत संस्था है, अपितु एक विचार आंदोलन है। इसे समझने के लिए कार्य से जुड़ना आवश्यक है। किसी भी व्यक्ति का कार्य के साथ प्रत्यक्ष जुड़ने से पूर्व जानकारी प्राप्त करने की इच्छा होना सहज है। वर्तमान समय में व्यक्ति, जानकारियाँ विविध माध्यमों से प्राप्त करता है। विकसनशील संगठन के नाते अपने कार्यकर्ताओं के भी इस हेतु विविध प्रयास चल रहे है।

समाज सम्पर्क करते समय अपने कार्य की जानकारियाँ देने के लिए एक पुस्तिका की आवश्यकता थी। इस आपूर्ति को देखते हुए कार्यकर्ताओं के प्रयासों से इस पुस्तिका का निर्माण हुआ। अपेक्षा है की पुस्तिका पढ़कर वाचक अवश्य ही कार्यप्रवृत्त होंगे।

श्रीमती स्नेहलता वैद ने एक कार्यकर्ता की मनोभूमिका से, देश भर से प्राप्त जानकारियों का अच्छी तरह संयोजन कर संपादन किया। श्री कृष्णकान्त भदोरियाजी (कर्णावती) का भी सम्पादन कार्य एवं मुद्रित शोधन में अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ। मुखपृष्ठ, अक्षर संयोजन से लेकर मुद्रण से जुड़े सभी का सहकार्य अभिनंदनीय है। हम सभी के आभारी है।

अनुक्रम

❖ वन एवं वनवासी - सनातन संस्कृति के अभिन्न अंग
❖ कल्याण आश्रम - पार्श्वभूमि एवं स्थापना
❖ कल्याण आश्रम की विकास यात्रा
❖ शिक्षा
❖ चिकित्सा
❖ महिला कार्य
❖ खेलकूद
❖ श्रद्धाजागरण
❖ हितरक्षा
❖ नगरीय कार्य
❖ सम्पर्क आयाम
❖ नगरीय वनवासी सम्पर्क
❖ प्रचार-प्रसार
❖ वन एवं वनवासी
❖ अपना उत्तर पूर्वांचल
❖ कार्य की उपलब्धियाँ एवं प्रभाव
❖ जागृति व संगठन
❖ आह्वान : आपसे अपेक्षा

❖❖❖

वन एवं वनवासी सनातन संस्कृति के अभिन्न अंग

पौष का महीना-हाड़ कँपा देनेवाली ठंड। यात्री को एक कार्यक्रम के निमित्त किसी वनवासी गाँव में जाना था। चलते-चलते रात हो गई। गंतव्य भी अभी १०-१२ मील दूर था। घनघोर अंधकार, हाथ को हाथ नहीं सूझ रहा था। यात्री चलते-चलते इतना थक चुका था कि आगे की दूरी तय करना दुष्कर ही नहीं असम्भव लगने लगा। चारों ओर गहरा सन्नाटा छाया था। सभी ग्रामवासी निद्रादेवी की गोद में विश्राम कर रहे थे। यात्री ने एक झोपड़ी का दरवाज़ा खटखटाया। गृहस्वामी से विनयपूर्वक निवेदन किया। भाई, क्या मैं आज रात तुम्हारी कुटिया में ठहर सकता हूँ ? चलते-चलते थक गया हूँ। कल प्रात: होते ही छतौरी के लिए प्रस्थान कर दूंगा। गृहस्वामी ने जोहार कर अत्यंत आदरपूर्वक अतिथि को बैठाया, भोजन के लिए आग्रह किया। उसने कहा कि महाशय भोजन की रुचि नहीं है, बस सोने के लिए चारपाई चाहिए। यात्री इतना अधिक क्लांत था कि लेटते ही उसे नींद आ गयी।

रात्रि के अंतिम प्रहर उसकी आँख खुली तो यह देख उसके नेत्र विस्फारित रह गये कि घर की महिला ने अपने ओढ़ने का एक मात्र कम्बल अतिथि को ओढ़ा दिया। इतना ही नहीं उसकी चारपाई के नीचे अलाव भी जला दिया ताकि ठंड के

कारण उसकी निद्रा में व्यवधान न हो और वह सुखपूर्वक सो सके। गृहस्वामी नीचे भूमि पर एक चटाई बिछाकर घुटने मोड़कर सो रहा था। यात्री की आँखों में कृतज्ञता के आँसू छलक आये। मेरी सुख-सुविधा के लिए इस दम्पति ने कितना कष्ट सहा। मैंने तो यह सोचा भी नहीं कि चारपाई और कम्बल देने के बाद उनके पास स्वयं को शीत से बचाने के लिए कुछ भी नहीं बचेगा। यात्री के संकोच को देखकर महिला ने आदरपूर्वक कहा – बाबूजी आप चिंता न करें, हमें तो सर्दी सहने का अभ्यास है। आप शहरवासी इतनी ठंड कैसे सहेंगे ? यात्री का हृदय वनवासी दम्पति की सदाशयता से जुड़ गया।

मेरे लिए इस दम्पति ने पूरी रात मानो जागकर बिताई है। उन्हें धन्यवाद देकर जाने को प्रस्तुत हुआ तो उस दम्पति ने कहा कि भगवान की कृपा से आप हमारी कुटिया में पधारे, तो जलपान कर के जाना। यात्री उनके आग्रह को टाल न सका। जलपान कर जेब से ५० रु. का नोट निकाला। भेंट के रूप में महिला को देने के लिए हाथ बढ़ाया। उस पर अनपढ़ महिला ने कहा, बाबूजी ! ऐसा न करो। आप अतिथि हैं, प्रभु की कृपा से आप हमारे दरवाजे पर आये हो। इसका दाम लेकर हम भगवान के दरबार में क्या जबाब देंगे ? बहुत आग्रह के बाद भी महिला ने रुपये नहीं लिए। यात्री ने उनका अभिवादन किया और कृतज्ञ मन से अपने गंतव्य की ओर चल पड़ा। चलते-चलते मन में विचारों का सागर तरंगित होने लगा कि वनवासी अनपढ़ और निर्धन हो सकते हैं, फिर भी कितने संवेदनशील, नम्र और उदार हैं। भारत के सनातन जीवनमूल्यों को अपनी खस्ता हालत में भी बड़ी निष्ठा के साथ संजोये हुए हैं। शहरों में तथाकथित सभ्य और शिक्षित लोगों के जीवन से ये जीवनमूल्य शीघ्रता से क्षीण हो रहे हैं। सामाजिक जीवन की यह प्राणमय चेतना विलुप्त हो रही है।

अपने वनवासी बंधु इस सनातन संस्कृति के वास्तविक संवाहक हैं। मानवीय संवेदनायें यहाँ सम्पूर्ण रूप से समाहित हैं। वनवासी द्वेष नहीं करता। उसके मन में प्रतिस्पर्धा का भाव नहीं है। संग्रह करना उसकी प्रकृति में ही नहीं। वह न तो किसी से कुछ माँगता है न किसी के सामने हाथ फैलाता है। परिश्रम कर अपना जीवनयापन करना उसका परिचय है। दूसरों का सुख देखकर ईर्षा करना वनवासी जानता ही नहीं। वनवासी सम्भवत: छल, छद्म से कोसों दूर है। प्रकृति प्रेमी एवं श्रमवीर होते हैं।

गीता को वास्तविक अर्थों में जीनेवाले हमारे वनबंधु हैं, भले ही उन्होंने गीता का कभी वाचन न किया हो। कुछ ऐसे भी होंगे, जो प्रभु श्रीराम का चित्र न पहचान

पायें, परन्तु उनके हृदय में साक्षात प्रभु श्रीराम का वास है। वनवासी समाज का दर्शन, हमें देता है एक दिव्य समाज का दर्शन।

यह समाज जहाँ एक ओर अपनी सरलता, सहजता और प्रकृति प्रेम के लिए प्रसिद्ध है वहीं दूसरी ओर परिश्रम, शौर्य और स्वाभिमान इनकी एक विशिष्ट पहचान है। इसी भूमि में देश की संस्कृति का बीज पलता है और वृक्ष बढ़ता है। भौतिकता ने उन्हें सम्मोहित नहीं किया है।

देश धर्म के रक्षक - हमारे वनवासी

भारत का वनवासी समाज, सदैव एक राष्ट्रीय घटक के नाते रहा है। वेद काल के भारत में एक जन के रूप में उनको देखा गया था। अत: वेद में पाँच जन अथवा पंचजन का उल्लेख है, जिसमें पाँचवां जन निषाद है, जिसे राष्ट्र के घटक के रूप में ही माना है। वे निषाद ही आज के वनवासी हैं। इनका कार्य वनों का दोहन करना और आवागमन के साधनों की प्रतिकूलता के चलते वहीं रहना, ऐसा माना गया था।

छत्तीसगढ़ के महान संत, जिनका कुछ वर्ष पूर्व निर्वाण हुआ, श्री गहरा गुरुजी ने शोध करके और करवा कर यही पाया कि अनेक जनजातियाँ पूर्व में क्षत्रिय कुल की थीं। वनांचलों में रहने के कारण वे वनवासी और अपने भारतीय संविधान में उद्धृत जनजाति संज्ञा से जाने गये।

वेद, रामायण एवं महाभारत काल में वनवासियों के कई शक्तिशाली एवं उन्नत राज्य थे। वनवासी समाज सुसंस्कृत एवं उन्नत जीवन का धनी था, यह भी उसी साहित्य से ध्यान में आता है। आज हम जिन्हें जनजाति या वनवासी कहते हैं, उनके सिर्फ डेढ़-दो सौ वर्ष पूर्व तक भारत में कई राज्य थे, वे राजकुल आज भी हैं। इन राजाओं ने हिन्दू देवी-देवताओं के कई मंदिर भी बनाए जिनको हम आज भी देख सकते हैं। इनके दरबार में कवि, कलाकार, दिग्गज पंडित भी होते थे, संस्कृत ग्रंथों की रचना होती थी। पुरातन समय से यही अनुभव है कि सभी हिन्दू राजा ऐसा ही तो करते थे। संक्षेप में हिन्दू और जनजाति ऐसा भेद उस कालखंड में नहीं था। महाराष्ट्र के एक विद्वान व्यक्ति ने भारत भ्रमण किया और वापस आते ही तुरन्त सन् १९५७ में प्रवास वर्णन लिखा। उस समय ओंकारेश्वर में एक भील राजा राज कर रहे थे। यहाँ के ज्योतिर्लिंग के दर्शन करना और पश्चात भील राजा के दर्शन करने से ही तीर्थयात्रा सफल मानी जाती थी, पुण्य प्राप्त होता, ऐसा पुस्तक में लिखा है। उस विद्वान व्यक्ति ने ऐसा ही किया था। तात्पर्य यही कि डेढ़-दो सौ वर्ष पूर्व तक हिंदू और जनजाति अलग नहीं थे। एक सामाजिक ताने-बाने से सारा

समाज जुड़ा था ।

वनवासियों का गौरवशाली इतिहास

हमारे धर्म ग्रंथ, पुराण और ऐतिहासिक ग्रंथ साक्षी हैं कि वनवासी समाज हिन्दू समाज का अभिन्न अंग है और सुख-दुःख के सभी प्रसंगों में इन त्यागी, तपस्वी, भोले-भाले वन बंधुओं ने अपना सर्वस्व उत्सर्ग करने में कभी कसर नहीं छोड़ी । वैदिक काल से लेकर आज तक की विकास यात्रा में उनका अपूर्व योगदान रहा है । भारतीय संस्कृति का उत्कर्ष वन में हुए गहन चिंतन से हुआ । पर्णकुटी में रह रहे ऋषियों की कठोर तपस्या और आध्यात्मिक अनुभूतियों से हुआ ।

भक्ति, सादगी और वैराग्य से अलंकृत वनवासियों में पराकाष्ठा का शौर्य और पराक्रम रहा है । इसकी झांकियाँ रामायण और महाभारत के अनेक प्रसंगों में मिलती हैं । महावीर हनुमान जैसे पराक्रम का ही जीवंत रूप थे तो रावण के दरबार में अपने पाँव को रोपकर रावण सभा के वीरों को ललकारने वाले अंगद ने न केवल पराक्रम का अपितु अपनी बुद्धि और चातुर्य का भी परिचय दे दिया ।

राम को मीठे बेर खिलाने वाली अनन्य भक्ति स्वरूपा भीलनी शबरी के उत्कट प्रेम का प्रसंग याद आता है तो मन आज भी रोमांचित हो जाता है । उसने तो राम-लक्ष्मण का मार्गदर्शन किया था ।

- राम से निषादराज गुह की मित्रता और गंगा पार करने के लिए प्रभु चरण पखारने की शर्त रखने वाले परम भाग्यशाली केवट की कथा आज भी हमें भाव गंगा में अवगाहन करा देती है ।

- गुरु भक्ति का बेजोड़ उदाहरण था एकलव्य जिसने दक्षिणा में अपना अँगूठा देने में एक क्षण की देरी नहीं की थी ।

- यदि वन राजकुमारी हिडिम्बा और पाण्डव कुमार भीम का पराक्रमी पुत्र घटोत्कच महाभारत के युद्ध में प्रवृत्त नहीं हुआ होता तो शायद अर्जुन के लिए सुरक्षित कर्ण का शक्ति बाण अवश्य ही अर्जुन की मृत्यु का कारण बनता और युद्ध का स्वरुप ही बदल जाता ।

- आमतौर पर १८५७ को ही स्वतंत्रता संग्राम का प्रथम समर माना जाता है । लेकिन इससे २८ वर्ष पूर्व १८२८ में वीर बुधु भगत ने न सिर्फ क्रान्ति का शंखनाद किया था, बल्कि अपने साहस व नेतृत्व क्षमता से १८३२ में लरक्का संघर्ष नामक ऐतिहासिक आन्दोलन का सूत्रपात किया था । सन् १८०० में राँची से ३७ कि. मी. दूर पश्चिम में चान्हों प्रखण्ड में सिलालाई गाँव में जन्में बुधु भगत ने १८२७ में ही अपनी लड़ाई की पहली शुरूआत कर दी थी । जल्दी ही इसमें मुण्डा, चेरो, खेरवार,

जनजातियों के लोग जुड़ते चले गए। लरक्का संघर्ष मूलत: वनवासियों को अपने परम्परागत जमीनी हक से बेदखल कर उसे अंग्रेजी हुकूमत, तत्कालीन राजाओं तथा जमींदारों को सौंपने व परम्परागत पेय पदार्थ हंडिया पर आबकारी लगाने व अत्याचारों के विरुद्ध था। इस आन्दोलन का प्रभाव दावानल की तरह छोटा नागपुर क्षेत्र में फैला।

- ढाका के नवाब ने त्रिपुरा के देवबर्मन के राज्य पर आक्रमण कर दिया। उनके जमातिया सेनापति बंधुओं ने नवाब की सेना को घेरकर पूरी की पूरी सेना गारद कर दी। दूसरी बार आक्रमण करने की ढाका की हिम्मत ही नहीं हुई।

- बिरसा मुण्डा ने २३ साल की छोटी सी उम्र में अग्रेजों के विरुद्ध इतना जबरदस्त युद्ध किया कि उसकी आँच ब्रिटेन तक पहुंच गयी।

- हमारे राष्ट्रीय संघर्षों में वनवासी सदैव अग्रणी रहा। अंग्रेजों की शक्ति बढ़ने लगी और उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में ही उन्होंनें सम्पूर्ण भारत पर कब्जा जमा लिया। परन्तु उनको सबसे कड़ा संघर्ष वनवासी क्षेत्र में ही करना पड़ा। वह चाहे नागालैण्ड, असम, मेघालय, अरुणाचल हो, उड़ीसा व मध्यप्रदेश हो, चाहे महाराष्ट्र व केरल हो, सन् १८५७ का स्वतंत्रता युद्ध भी सबसे लम्बे कालखंड तक वनांचलों में ही चला था।

■

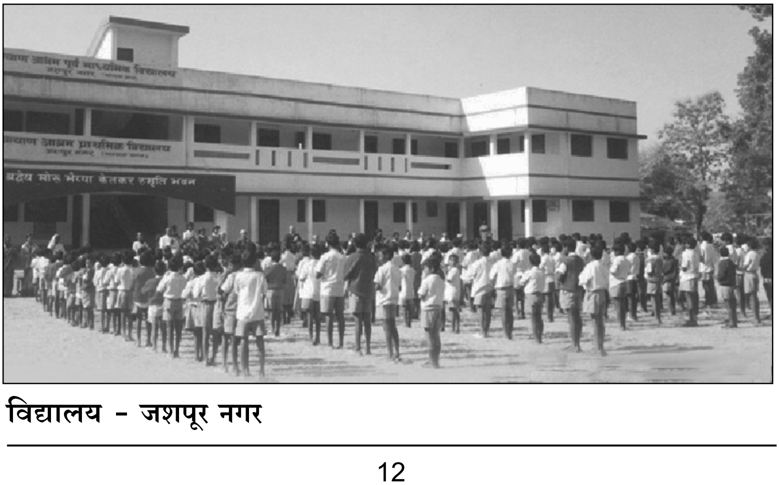

विद्यालय - जशपूर नगर

कल्याण आश्रम पार्श्वभूमि एवं स्थापना

विकास की पश्चिमी धारणा ने हमें अपनी जीवनशैली से ऐसा काटा कि हमारे वन और वनवासी दोनों उपेक्षित हो गये। पिछले सात-आठ सौ वर्षों से देश निरंतर परकीय आक्रमणों से त्रस्त रहा। शक, हूण, यवन, कुषाण, मंगोल, पठान और मुगल – एक के बाद एक भीषण आक्रमणों के कारण समाज व्यवस्थायें छिन्न-भिन्न हुई। युद्धकाल लम्बा चला तो पर्दा प्रथा, अस्पृश्यता जैसी बुराइयाँ भी आईं और वनवासी संपर्क की परंपरा भी शिथिल हुई। फिर आया अंग्रेज। बिखरी हुई व्यवस्थाओं में उसने अपनी अलगाववादी, षड्यंत्रकारी सोच के बीज बो दिये। भाई को भाई से लड़ाया – शिक्षा व्यवस्था बदली, जंगल जमीन के कानूनों को अपने शासकीय हित में बदला – जंगल के मालिक को Forest Dweller बना दिया। सांस्कृतिक अग्रज वनवासी को आदिवासी कहकर अलग पहचान दी – अपने ही शासन के विरुद्ध वनवासी के हाथ में हथियार दिया – आदिवासी को इस धरती का मूल निवासी और शेष हिन्दू समाज को आक्रामक बताकर भारत राष्ट्र के भीतर अनेक राष्ट्र होने की संकल्पना दी – फिर उसे खाद-पानी देकर विष फलों का पेड़ बना दिया। योजनाबद्ध रूप से ऐसा षड्यंत्र रचा कि शहरवासी हिन्दू और वनवासी हिन्दू भाई न होकर दुश्मन से दिखने लगे हैं।

हजारों वर्षों के संघर्षकाल में भारत माता की भावनात्मक एकता के सारे तार छिन्न-भिन्न हो गये। इस कारण राष्ट्र जीवन आज अनेक संकटों से घिर गया है। 'हम सब एक हैं' इस शाश्वत सत्य से वनवासियों को बृहत समाज में समरस करने के उद्देश्य से स्वर्गीय रमाकान्त केशव देशपांडे उपाख्य बालासाहब देशपाण्डे द्वारा जशपुर नगर (छत्तीसगढ़) में वनवासी कल्याण आश्रम की स्थापना सन् १९५२ में की गई। परन्तु इसमें कुछ आकस्मिक संयोगों का भी हाथ रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री पं. रविशंकर शुक्ल का प्रवास हुआ। सब जगह उनका उत्साह से स्वागत हुआ एवं भारत माता की जय के नारे लगे। परन्तु जशपुर क्षेत्र में जगह-जगह काले झण्डे दिखाकर विरोध प्रदर्शन हुआ। उकसानेवाले तत्व (इसाई मिशनरी और उनको चलानेवाले विदेशी तत्व) परदे के पीछे रहकर मानों कठपुतलियों को नचानेवाले थे। पं. रविशंकरजी के सामने इन तत्वों की जानकारी दी गई। वनवासी क्षेत्र के लिए कार्य करनेवाले श्री ठक्कर बापा से उन्होंने सलाह माँगी। चूंकि जशपुर क्षेत्र में कोई राष्ट्रवादी सेवा संस्था नहीं थी अत: उन्होंने नये सिरे से शासन द्वारा 'पिछड़ा वर्ग समाज कल्याण विभाग' खोलने का सुझाव दिया एवं ऐसे कार्य के निदेशक के रूप में उनके विश्वासपात्र श्री. पांडुरंग गोविंद वणीकरजी को नागपुर भेज दिया। यह विभाग १९४८ के प्रारम्भ में स्थापित हो गया। जशपुर में कार्य करना सभी दृष्टिकोण से कठिन ही था। यह श्री. वणीकरजी जानते थे। उनके परिचित श्री. रमाकान्त केशव देशपांडे, जो रामटेक में वकालत करते थे, को आपने योग्य पाया। रा. स्व. संघ के संस्कारों के कारण उत्कट देशभक्ति से युक्त, व्यवहारकुशल, साहसी, दृढ़निश्चयी, निर्णय लेने की क्षमतावाले, प्रामाणिक ऐसे अन्य कई गुणों से युक्त थे श्री. देशपांडेजी। सभी प्रकार की बाधाओं को पार करने की उनमें अद्‌भुत क्षमता भी थी। उनका जशपुर क्षेत्र के क्षेत्रीय संगठक (Area Organiser) के नाते नियुक्तिपत्र दे दिया। देशपांडेजी मई १९४८ के पूर्वाध में जशपुरनगर पहुँचे और तुरन्त पूरे क्षेत्र का प्रवास किया, जनता से सम्पर्क किया और आ सकने वाली बाधाओं को भी पहचान लिया। शासन ने मात्र आठ शालाओं, जनजागरण के कार्य व थोड़े अन्य कार्यों के लिए आवश्यक अंदाजपत्र (बजट) स्वीकृत किया था। उन्होंने अत्यन्त आग्रह करके १०० शालाओं के लिए बजट का पुनर्निर्धारण भी करवा लिया। जिसके लिए श्री वणीकर और श्री ठक्कर बापा भी आश्चर्य चकित हुए। ठक्कर बापा ने तो कहा कि एक वर्ष में यदि सौ शालाएँ खुल गईं तो वे स्वयं कार्य देखने के लिए जशपुर क्षेत्र में आएँगे। वर्ष १९४९ में सौ शालाओं का लक्ष्य पूरा होते ही श्री ठक्कर बापा ने ८० वर्ष की आयु में उस अति

दुर्गम क्षेत्र में प्रवास किया और ग्रामों में 'भारत माता की जय' सुनकर वे आनंद विभोर हो गये। उन्होंने देशपांडेजी को पुरस्कार में दो सौ रुपये देकर प्रसन्नता व्यक्त की। जनवरी १९५१ में आदयणीय ठक्कर बापा का देहावसान हो गया। श्री देशपांडे जी समझ गये कि वनवासियों को जागृत करने, उनकी सेवा करने और उनका सर्वांगीण विकास करने का कार्य अब शासकीय सेवा में रहते हुए करना भविष्य में असम्भव होगा। अत: इस कार्य को करना है तो सामाजिक संस्था बनाकर ही करना होगा, यह समझकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तत्कालीन सरसंघचालक श्रीगुरुजी से सम्पर्क किया, वनवासी समाज के सम्बन्ध में बातचीत की एवं कम से कम जशपुर क्षेत्र में वे जो कुछ कर सकें, उसको आगे बढ़ाने की आवश्यकता पर बल भी दिया। श्री गुरुजी ने संघ के मध्यभारत प्रांत के एक निष्ठावान, मृदुभाषी, कर्मठ, कुशल एवं अनुभवी विभाग प्रचारक श्री मोरेश्वर हरीभाऊ केतकरजी को भी श्री देशपांडेजी के कार्य में सहयोग देने के लिये जशपुर भेज दिया। मई १९५२ में देशपांडेजी ने जशपुर में वकालत का व्यवसाय शुरू किया। देशपांडेजी ने जशपुर के राजा विजय भूषण सिंह जूदेव के सामने अपनी समस्त योजनायें रखी, अपने उद्देश्यों को स्पष्ट किया और कार्य संचालनार्थ खाली महल के कुछ कक्षों की माँग की। राजा ने प्रसन्नता से कक्षों को नि:शुल्क उपयोग करने के लिए दे दिया। अत: दिनांक २६ दिसम्बर १९५२ के दिन पुराने महल में नागरिकों, ग्रामीणों व राजघराने के सदस्यों के सम्मुख हवन किया। उसी समय छात्रावास को प्रारंभ करने की घोषणा की।

वर्ष १९५३ की बात होगी जब एक दिन राजा साहब ने देशपांडेजी एवं श्री केतकरजी को उनके आराम निवास पर बुलाया। पहले से वहाँ नगर के कुछ प्रमुख लोग व राज पुरोहित उपस्थित थे। अनौपचारिक रूप से वार्तालाप हो रहा था। राजा साहब ने पूछा कि अपनी संस्था का नाम क्या रखा है ? वास्तव में तब तक नाम रखने का विचार भी नहीं आया था। राज साहब ने अपने राजपुरोहित से भी इस सम्बन्ध में परामर्श किया। वहाँ उपस्थित सभी को भी सुझाव देने को कहा। अंत में राजा साहब द्वारा 'कल्याण आश्रम' नाम का सुझाव देने पर यह नाम सर्वसम्मत हुआ।

छात्रावास के रूप में कार्य चल रहा था। सारी व्यवस्थाएँ खडी हो रही थी कि ऐसे ही एक दिन राजा साहब ने श्री देशपांडेजी व श्री केतकरजी को बुला लिया। कार्य कैसा चल रहा है ? इसकी पूछताछ की। फिर पूछा कि आर्थिक व्यवस्था किस प्रकार करते हैं। श्री देशपांडेजी ने बताया कि छात्रों से ही दाल-चावल लेते हैं और

कमी की पूर्ति स्वयं ही करते हैं। तब राजा साहब ने शास्त्रों की व्यवस्थानुरूप अपने प्रिवीपर्स (अपनी निजी आय) का दसवाँ हिस्सा नगद श्री देशपांडे जी के हाथों में रखा और प्रतिवर्ष देते रहे। कुछ समय पश्चात प्रिवीपर्स बंद होने की बात चली थी, तब राजा साहब ने श्री बालासाहब एवं श्री मोरुभैया जी को फिर से बुलाकर कहा कि प्रिवीपर्स अब बंद होने की सम्भावना है। ऐसे समय में कल्याण आश्रम के लिए अलग से व्यवस्था करने के लिए सोच रहा हूँ। आगे चलकर उन्होंने ग्राम बगीचा एवं करदना के लगभग १५० एकड़ भूमि कल्याण आश्रम को दान में दी।

सन् १९५३ में संघ के सरगुजा जिला प्रचारक श्री भीमसेन चोपड़ा भी कल्याण आश्रम के कार्य में सम्मिलित हो गए। श्री भीमसेन जी को कोलकाता महानगर जैसै नगरों में घूमने, सम्पर्क करने का कार्य दिया था। उन्होंने भी कार्य के लिए धनसंग्रह करना प्रारम्भ किया। इस प्रकार बालासाहब ने कल्याण आश्रम के रूप में वनवासी क्षेत्र में वनवासी सेवा के एक नये वैचारिक अधिष्ठान को खड़ा किया।

■

कल्याण आश्रम की विकास यात्रा

किसी संस्था की स्थापना करना एक बात है और उसे कायम रखते हुए बढ़ाना या विकसित करना उससे भी बड़ी बात है। संगठन को समय-समय पर कमजोर करने और तोड़ने की साजिशें होती रही हैं। इसमें कभी ज्वालामुखी की तरह विस्फोटक स्थिति भी आयी और ज्वारभाटा की तरह उतार-चढ़ाव भी आये। किन्तु ऐसी परिस्थितियों में संगठन कमजोर होने के बजाय और मजबूत हुआ। इसकी जड़ें और गहरी हुईं। आज भी यह संगठन मेरु पर्वत की भाँति अविचल खड़ा है तथा प्रगति की ओर अग्रसर है। 'श्रेयांशि बहु विघ्नानि' की उक्ति को चरितार्थ करते हुए कल्याण आश्रम को पग-पग पर अवरोधों का सामना करना पड़ा। जशपुर में १०-१२ बड़े केंद्र इसाई मिशन के थे, लगभग दो सौ नन और पादरी थे, ४०-५० विदेशी भी थे, गाँव-गाँव में कार्यकर्ता थे, डेढ़ दो सौ मान्यता प्राप्त और अन्य शाखाएँ थीं, अनेक वाहन थे, बाँटने के लिए टनों दलिया, तेल, दूध पाउडर था, बड़े बड़े आठ-दस छात्रावास थे, एक बड़ा हॉस्पिटल था, जबकि कल्याण आश्रम की शाला में बारह और छात्रावास में तेरह बालक थे। इसके संचालन के लिए थे दो व्यक्ति और देशपाण्डे जी वकालत से जो प्राप्त करते थे उसका कुछ अंश था आश्रम कार्य

के लिए। उस समय के कार्य की स्थिति से निराश केतकरजी कभी कभी वापस लौटने का मन बना लेते थे, परन्तु दैवी प्रेरणा और उच्चादर्शों के कारण ही कार्य फलता-फूलता है इसी से यह सिद्ध होता है।

श्रीमंत राजा विजय भूषण सिंह जूदेव कल्याण आश्रम के पहले दानदाता थे। इसके बाद ही कल्याण आश्रम के कार्यकर्ताओं ने बाहर से दान प्राप्त करना प्रारंभ किया। श्री देशपांडेजी का विश्वास था कि शुद्ध कार्य के कारण भगवद् प्रेरणा से व्यक्ति दान में धन देता है। जैसे किसी नदी के उद्‌गम स्थल पर जल की धारा छोटी होती है वैसी ही स्थिति थी भविष्य के इस विशाल सेवा संगठन के प्रारंभ की।

प्रारंभ के वर्षों में जशपुर की प्रयोगशाला में वन सेवा का यह प्रयोग सिद्ध होता रहा। इस बीच इसाई धर्म प्रचारकों के छल-छद्म पूर्ण राष्ट्रघाती कार्यों की जाँच करने के उद्देश्य से मध्य प्रांत के मुख्यमंत्री श्री रविशंकर शुक्ल द्वारा सन् १९५४ में जस्टिस श्री भवानी शंकर नियोगी की अध्यक्षता में नियोगी आयोग की घोषणा कर दी गयी। प्रश्न था कि कौन हिन्दू पक्ष को तथ्यों और प्रमाण सहित आयोग के सम्मुख प्रस्तुत कर आयोग को तर्क संगत निष्कर्ष तक पहुंचाने में सहयोग करेगा। कल्याण आश्रम ने संघ के प्रचारक श्री कृष्णराव सप्रेजी एवं श्री भीमसेनजी चोपड़ा के परिश्रम पूर्ण सहयोग से यह कार्य सम्पन्न किया।

पूज्य रामभिक्षुकजी महाराज, पूज्य श्री स्वरूपानंदजी महाराज और पूज्य प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी जैसे संतों को जशपुर के वनवासी क्षेत्र में आमंत्रित कर बालासाहब ने कल्याण आश्रम के श्रद्धा जागरण आयाम का मानो शुभारम्भ किया। शताब्दियों बाद प्रथम बार वनवासी के द्वार पर उनके धर्म भाई ने दस्तक दी थी। कल्याण आश्रम के स्वास्थ्य रक्षा आयाम की शुरूआत भी इसी समय हुई थी। इस प्रकार शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक विकास और श्रद्धा जागरण इन चार आयामों की नींव और उसका विकास सन् १९७५ तक हो चुका था।

दुर्भाग्य से इस वर्ष राजनैतिक कारणों से अपातकाल की घोषणा हुई। कल्याण आश्रम के प्राय: सभी सदस्य और कई कार्यकर्ताओं को मीसा के अन्तर्गत कारावास में डाला गया। वर्ष १९७७ में आपातकाल समाप्त होते ही मानों रात्रि का घना अंधकार समाप्त हो गया। आपातकाल के भयावह संकट पर भी बालासाहब की इस श्रद्धा ने विजय पाई। सचमुच कल्याण आश्रम का कार्य यह ईश्वरीय कार्य है। १९७७ कल्याण आश्रम का रजत जयंती वर्ष। समय था विस्तार का। संघ के अनेक प्रचारकों और कार्यकर्ताओं के सक्रिय सहयोग तथा तृतीय सरसंघचालक श्री बालासाहेब देवरस के आशीर्वाद से वनवासी कल्याण आश्रम का स्वरूप अखिल भारतीय हो गया। कार्य

का विस्तार द्रुत गति से होने लगा। कार्य को गति देने में निम्न कार्यक्रमों ने मील के पत्थर का कार्य किया।

प्रधानमंत्री, कल्याण आश्रम में :

दिनांक १८ अक्टूबर १९७७ को जशपुर में प्रधानमंत्री श्री मोरारजीभाई देसाई का आगमन हुआ। जब प्रधानमंत्री का आगमन कल्याण आश्रम में हो रहा था तो मार्ग के दोनों ओर वनवासी महिलायें पुरुष वेश धारण कर हाथ में धनुष्य बाण लेकर पंक्तिबद्ध खड़ी थीं। मैदान में विभिन्न वनवासी वृंद लोकनृत्य कर रहे थे। इन सबके बीच से चलते हुए प्रधानमंत्री मंच पर पहुंचे। यहाँ का कार्यक्रम भी प्रभावी रहा। बाद में प्रधानमंत्री ने अनौपचारिक वार्तालाप में कार्यक्रमों की रचना आदि की बहुत प्रशंसा की थी।

वर्ष १९८६-८७ में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह जशपुर नगर में कल्याण आश्रम द्वारा आयोजित सभा के कार्यक्रम में आए। इसमें हजार-देढ़ हजार संख्या में पहाड़ी कोरबा (विशेष पिछड़ी जनजाति) भी अपनी पोषाक में एवं धनुष बाण लेकर आए थे। मात्र छोटी धोती पहने एवं कंधे पर ओढ़ने हेतु छोटा कपड़ा ही तो था उनके पास। श्री देशपांडे जी ने उनकी स्थिति का थोड़ा सा विवरण दिया। श्री सिंह ने पहाड़ी कोरबाओं के लिए एक विकास प्राधिकरण बनाने की घोषणा की। इस प्राधिकरण द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, जन-प्रबोधन, आर्थिक विकास आदि के लिए कार्य किया जा रहा है, जो शासन द्वारा गठित किया गया है। अपनी नीतियों के अनुसार कल्याण आश्रम ने संस्था के लिए किसी भी शासकीय सहायता की मांग नहीं की थी। सभा के पश्चात मा. प्रधानमंत्री कल्याण आश्रम परिसर में आये और छात्रों से वार्ता की। अनौपचारिक वार्तालाप में उन्होंने छात्रों के मुख पर देखीं आभा का विशेष उल्लेख किया।

श्री देशपांडेजी का सप्तदश पूर्ति कार्यक्रम:

वर्ष १९८४-८५ व्यापक रूप से भारत में मा. श्री बालासाहब उपाख्य र. के. देशपांडेजी के ७० वर्ष पूर्ति के उपलक्ष्य में एक डेढ़ वर्ष तक अभियान चला। कल्याण आश्रम का कार्य नया ही था। वह प्रान्त-प्रान्त में चालू हो गया था एवं संस्थाएं भी पंजीबद्ध हो गई थी। कार्य यदि तेजी के साथ बढ़ाना है तो कार्यकर्ता के साथ ही साथ पर्याप्त आर्थिक बल भी रहना आवश्यक था। इस निमित्त ही श्री देशपांडेजी को प्रान्त-प्रान्त में थैली भेंट करने का कार्यक्रम चलाया। श्री देशपांडेजी का जीवन और कार्य भी कार्यकर्ताओं में प्रेरणा भरनेवाला था। इस समय जनता को भी एक संदेश दिया गया। वनवासी समाज का सर्वांगीण विकास

के बिना भारत को विकसित राष्ट्र की श्रेणी में नहीं गिना जाएगा । अत: वनवासी समाज के लिए किया जानेवाला कार्य यह कर्तव्य के रूप में होनेवाला राष्ट्रीय कार्य है । साथ ही वनवासी समाज हमारे बन्धु हैं, हमारी नसों में एक ही रक्त बह रहा है । अत: उसके लिए जो भी धन दिया जाता है, कार्य किया जाता है, वह दयाभाव से नहीं अपितु, राष्ट्रीय कर्तव्य पूर्ति के लिए किया जानेवाला कार्य है, यह समझ दानदाता एवं कार्यकर्ताओं में निर्माण हो इस ओर विशेष ध्यान दिया गया । अत: इस दृष्टिकोण से यह अभियान भी सफल हुआ, ऐसा हम कह सकते हैं । जशपुर क्षेत्र में कल्याण आश्रम का कार्य दिसम्बर १९५२ से चल रहा है । अत: कल्याण आश्रम के सम्बन्ध में आदरभाव रखनेवाले वनवासी गाँव-गाँव में बड़ी संख्या में हैं । अत: यह तय किया गया है कि धान की फसल तैयार होती है तब वनवासियों से धान को ही एकत्रित किया जाए । श्री देशपांडेजी के लिए आदरभाव व कल्याण आश्रम कार्य के लिए आत्मीय भाव रहने के कारण एकत्रित धान को ट्रैक्टरों में भर भर कर लाना पड़ा था । जशपुर में इस प्रकार किए गए एकत्रित धान का मूल्य पूरे जिलें में धनसंग्रह अभियान हुआ था, उसका ४५-५० प्रतिशत आँका गया था । यह देख कर सभी अचंभित थे ।

कार्यकर्ता प्रशिक्षण एवं शोधकार्य

वर्ष १९८४ में कल्याण आश्रम के अखिल भारतीय स्वरूप में निखार आ गया था । अत: विभिन्न प्रकार व योग्यताओं के कार्यकर्ताओं के लिए आवश्यक प्रशिक्षण देने के सम्बन्ध में विचार हुआ । वर्ष १९८५ में Tata Institute of Social Sciences, Mumbai द्वारा कल्याण आश्रम के कुछ प्रांतीय, अखिल भारतीय कार्यकर्ताओं के लिए सात दिन का प्रशिक्षण वर्ग आयोजित हुआ जो उस संस्था के प्रशिक्षित व सुयोग्य प्राध्यापकों ने चलाया । उसका विशेष लाभ होता है यह कार्यकर्ताओं के ध्यान में आया । १९८६ के प्रारम्भ में दादरा नगर हवेली (केन्द्रशासित) के मोटा रांधा गाँव को प्रशिक्षण एवं शोध के लिए चुना गया ।

कुछ वर्षों तक देश भर से कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण केंद्र पर आना हुआ । विविध प्रयोग भी हुये । कुछ अधिकारी और कार्यकर्ताओं की इस प्रशिक्षण केन्द्र के विकास हेतु यहाँ रहने की योजना बनी । तत्कालीन अखिल भारतीय संगठन मंत्री माननीय श्री रामभाऊ गोडबोलेजी का विशेष मार्गदर्शन रहा । मोटा रांधा अपने कल्याण आश्रम के अखिल भारतीय केन्द्र के रूप में कुछ वर्ष कार्यरत रहा । पश्चात अखिल भारतीय बैठक में इसके संदर्भ में चर्चा चली, समीक्षा हुई । प्रशिक्षण का माध्यम, भाषा, खानपान एवं आवागमन इन सभी संदर्भों में

मर्यादाओं को देख 'प्रशिक्षण' यह प्रान्त स्तर पर होना चाहिए, ऐसा निर्णय हुआ। स्थानीय समाज को हम कृषि एवं अन्य प्रकार के प्रशिक्षण दे सकते हैं। इस प्रकार का विचार किया गया।

गले लगाओ अभियान

गले लगाओ अभियान का उद्देश्य सम्पूर्ण समाज में जनजातियों के सम्बन्ध में सही सोच निर्माण करने का प्रयत्न करना था। इतना ही नहीं तो वनवासी से हमारा मानो राष्ट्रीय दृष्टिकोण से पारिवारिक सम्बन्ध है, रक्त का नाता है, यह विश्वास, यह आस्था अंत:करण में दृढ हो जाए, यह अत्यंत आवश्यक था। आखिर समाज में वनवासियों के सम्बन्ध में जो गलत धारणाऐं थीं उनको हमारे कार्यकर्ता ही तो दूर करनेवाले थे। इस अभियान के लिए श्री हनुमान एवं श्री रामचंद्र परस्पर आलिंगन बद्ध हैं ऐसा चित्र हजारों की संख्या में छापा गया था, जिसके नीचे लिखा गया था, 'तू मैं एक रक्त'। इसको वितरित किया गया। इससे समाज में, विशेष रूप से कार्यकर्ताओं में वनवासियों के सम्बन्ध में सही सोच का उद्भव हुआ। कार्यकर्ताओं का समाज के अंदर जाकर अपनी बात रखने के लिए भावनात्मक अभियान कार्यक्रम के रूप में चलाने का अवसर भी मिला। अत: यह कार्यक्रम सफल रहा ऐसा कहा जा सकता है।

मूलनिवासी संकल्पना और हम

राष्ट्रीय अखण्डता एवं सामाजिक समरसता के लिये विघातक 'मूलनिवासी' संकल्पना के संदर्भ में सन् १९९२ में प्रधानमंत्री श्री पी.व्ही. नरसिंह राव जी को वनवासी कल्याण आश्रम के तत्कालीन अध्यक्ष श्री बालासाहब देशपांडे जी ने एक ज्ञापन देकर भारत की आंतर्राष्ट्रीय मंच पर क्या भूमिका होनी चाहिये, इस हेतु अपने विचार व्यक्त किये। अमेरीका, अफ्रिका तथा ऑस्ट्रेलिया में कोई मूलनिवासी हो सकते है, परन्तु भारत में कोई भी व्यक्तिसमूह मूलनिवासी नहीं है। यहां तो हम सब भारतवासी मूलनिवासी है, क्यों की भारत में आक्रमणकारी अथवा बाहर से आये और मूल भारत के ऐसे दो जनसमूह नहीं है। मूलनिवासी संकल्पना यह भारत के लिये समाज विघातक है। कल्याण आश्रम ने ज्ञापन देकर सरकार को सूचीत किया की भारत अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित इस मूलनिवासी संकल्पना का स्वीकार न करें। संयुक्त राष्ट्रसंघ में अपने प्रतिनिधियों ने भी इन्ही विचारों का प्रतिपादन कर भारत की भूमिका प्रस्तुत की जो आज तक बरकरार है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का धनसंग्रह अभियान :

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ - यह संगठन विश्व का सबसे बड़ा अशासकीय संगठन

है। संघ को कल्याण आश्रम के समक्ष खड़ी रहनेवाली आर्थिक कठिनाइयों की कल्पना थी। अत: उन्होंने इस राष्ट्रीय कार्य में आर्थिक सहयोग देने का निश्चय किया। १९९७-९८ में यह अभियान चलाया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सर्वोच्च अधिकारी मा. प्रो. राजेन्द्रसिंह जी स्वयं धनसंग्रह अभियान में सम्पर्क हेतु निकले थे। वास्तव में यह कल्याण आश्रम के लिये ही नहीं, सभी के लिए अनौखी एवं अभूतपूर्व घटना थी। इस अभियान में जो धनसंग्रह हुआ उसके कारण आर्थिक दृष्टि से अभावग्रस्त १०-१२ प्रान्तों को तथा अ.भा. वनवासी कल्याण आश्रम के अपने लिए सुरक्षित निधि (Corpus Fund) रखने का अवसर मिल गया।

स्वर्ण जयंती वर्ष :

दिनांक २५ दिसंबर २००२ को कल्याण आश्रम के कार्य को ५० वर्ष पूरे हो रहे थे। इस उपलक्ष्य में स्वर्ण जयंती पूर्ति वर्ष बड़े पैमाने पर मनाना तय हुआ। परन्तु व्यवस्था सम्बन्धी कठिनाइयों और कार्यकर्ताओं की व्यस्तता के कारण स्वर्ण जयंती समारोह वर्ष २००४, अक्टूबर में दिल्ली में मनाया गया। इस निमित्त सम्पूर्ण देश में जिला स्तर से लेकर प्रदेश स्तर तक समारोह आयोजित किये गये। इन समारोहों के उद्देश्य से वनवासी कल्याण आश्रम ने ४२,७४६ ग्रामों का सम्पर्क किया। १२,५०,००० वनवासी परिवारों में भारत माता के चित्र पहुँचाये। हजारों वर्ष बाद सम्भवत: यह पहला अवसर था जब १०,८०० नगरवासी और वनवासी कार्यकर्ता मिलकर वनवासी घरों तक गये और उनके साथ समरस हुए। यह एक अनौखा अभियान था। देश भर में हुए इन समारोहों की छटा भी निराली थी। राँची (झारखंड) में हुए समारोह में तो १,००,००० लोगों ने हिस्सा लिया। इन समारोहों का भव्य एवं ऐतिहासिक समापन ६ से १० अक्टूबर तक मंडोली स्थित सेवाधाम (दिल्ली) में हुआ। इस समारोह में देश भर के लगभग ३०० जनजातीय समाजों के २५०० प्रमुख प्रतिनिधियों ने भाग लिया। अंतिम दिन नगर के विभिन्न स्थानों से वनवासियों की अपने परम्परागत वस्त्रालंकार पहनकर लोकनृत्य करते हुए शोभायात्रा निकली। हजारों लोगों ने खड़े होकर शोभायात्रा को आनंद के साथ देखा। भारत माता की जय-जयकार हो रही थी। इस सम्मेलन में वनवासी कार्य में आने वाली समस्याओं एवं उस पर आवश्यक उपायों के सम्बन्ध में चर्चा हुई। कुछ प्रस्ताव भी पारित हुए। सब मिलाकर कहा जा सकता है कि कार्यक्रम उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ। दिल्ली के नागरिकों का आत्मीयतापूर्ण सहयोग रहा।

■

शिक्षा

सुदूर वनवासी गाँवों में शिक्षा के प्रयासों की विशेष आवश्यकता है। शिक्षा में प्रशासन के चल रहे प्रयासों के पश्चात आज भी कई वनवासी बालकों को प्राथमिक विद्यालय में जाने हेतु ३ से ४ कि.मी. चलना पड़ता है। माध्यमिक शिक्षा हेतु विकास खण्ड अथवा जिला केन्द्र तक जाकर वहाँ छात्रावासों में रहकर पढ़ना अनिवार्य है। महाविद्यालय की शिक्षा तो विशेष प्रयास करने पर मिलती है।

देश स्वतंत्र हो कर आज छह दशक से अधिक समय हो गया। इतने वर्षों के सरकारी प्रयासों के कारण कुछ मात्रा में तो शिक्षा केन्द्रों की उपलब्धता हुई है, परन्तु इन शिक्षा केन्द्रों की उपलब्धता होते हुए भी अधिकतम स्थानों पर इनकी गुणवत्ता अच्छी है, ऐसा कह नहीं सकते। एक बार गाँव के एक साधारण व्यक्ति ने कहा कि वनवासी क्षेत्र में शिक्षा यानी सभी गाँवों में विद्यालय नहीं हैं, जहाँ विद्यालय है वहाँ अध्यापक नहीं हैं, जहाँ अध्यापक हैं वहाँ वे नियमित नहीं हैं और जहाँ अध्यापक नियमित आते हैं वहाँ वे जैसा उन्हें आता है वैसा पढ़ाते हैं। इसके कारण वनवासी बालक अध्ययन कैसे करता होगा इसका हम अंदाजा लगा सकते हैं।

सेवा का लक्ष्य सामने रखकर चलनेवाली कई सामाजिक

संस्थाएँ शिक्षा के इसी क्षेत्र में कार्यरत हैं। कल्याण आश्रम भी स्थापना से लेकर शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहा है। आज कई वनवासी गाँवों में अपने औपचारिक विद्यालय चल रहे हैं। साथ में कहीं-कहीं अनौपचारिक पद्धति से शिक्षा देने के प्रयास भी चल रहे हैं।

एकल विद्यालय

एक छोटे से वनवासी गाँव में चल रहा अपना एकल विद्यालय का प्रकल्प किसी भी व्यक्ति को सामाजिक कार्य के लिए प्रेरणा दे सकता है। वहाँ एक युवक अध्यापक के रूप में और विविध कक्षा के बालक एक साथ अध्ययन करते हैं। किसी के घर के आँगन में, तो किसी पंचायत भवन के पास वाले कक्ष में, कहीं मंदिर परिसर में तो कहीं किसी एक वृक्ष के नीचे, तीन-चार घण्टे तक एकल विद्यालय चलता है। आज सारे देश में कुल ३५८५ शिक्षा प्रकल्पों में ऐसे १३१४ एकल विद्यालय चल रहे हैं।

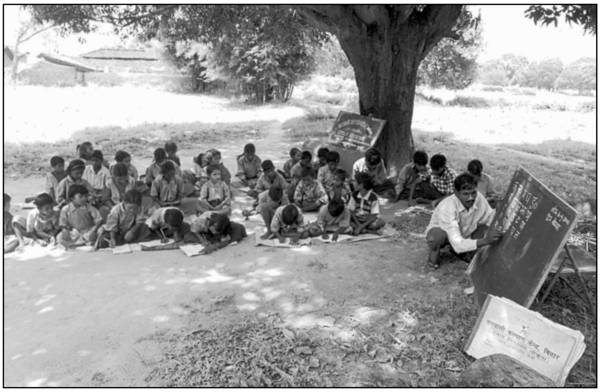

एकल विद्यालय

औपचारिक विद्यालय एवं एकल विद्यालय के साथ-साथ बालवाड़ी, बाल संस्कार केन्द्र, रात्रि पाठशाला, अभ्यास केन्द्र, पुस्तकालय, वाचनालय जैसे विविध शिक्षा प्रकल्प चल रहे हैं। इन सभी शिक्षा प्रकल्पों से लाभान्वित संख्या १,१७,९२० है। शिक्षा केन्द्रों में शिक्षा के साथ साथ संस्कारसिंचन पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है।

समय पालन, अनुशासन के साथ राष्ट्रीयता का बोध हो इस प्रकार के प्रयास भी होते हैं। अनुशासन के सन्दर्भ में जशपुरनगर के विद्यालय का अनुभव उल्लेखनीय है। वहाँ के सरकारी विद्यालय के प्राचार्य अपनी शाला का अनुशासन देख बहुत प्रभावित हुए। जाते-जाते उन्होंने कहा कि इस प्रकार का अनुशासन मेरी शाला में रखना तो

असम्भव सा है। जहाँ-जहाँ अपने शिक्षा केन्द्र चल रहे हैं, उनमें से अधिकतम गाँवों में ग्रामीण समितियाँ कार्यरत हैं। उन सभी के सहयोग से ही कठिनतम परिस्थिति में मार्ग निकाला जाता है।

छात्रावास

औपचारिक विद्यालय एवं अनौपचारिक शिक्षा के विविध प्रकल्पों के साथ-साथ, कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता छात्रावासों के संचालन द्वारा भी कार्यरत है। वैसे कल्याण आश्रम की स्थापना ही 'छात्रावास' से हुई है। सन् १९५२ में जशपुरनगर (छत्तिसगढ़) में १३ वनवासी बालकों के एक छात्रावास से कार्य प्रारम्भ हुआ। आज कुल २०६ छात्रावास चल रहे हैं। जिनमें ७५५६ बालक-बालिकायें निवास कर शिक्षा लाभ ले रहे हैं।

उद्देश्य

हम भारत माता के पुत्र और भारतीय समाज के अभिन्न अंग हैं ऐसी जिनकी दृढ़ निष्ठा हो ऐसे बुद्धिमान बल संपन्न हजारों युवक खड़े होने चाहिए। ऐसे युवक तैयार होना यह सहज कार्य नहीं है। छोटे बच्चों को लेकर उन्हें संस्कारित कर ऐसे राष्ट्रभक्त युवक खड़े करने होंगे। ऐसे युवक-युवतियाँ खड़े करने का माध्यम चुना गया छात्रावास।

योजना

बच्चों को केवल विद्यालयीन शिक्षा देकर अपना कर्तव्य पूरा नहीं होता। समाज को ऊपर उठाने हेतु जिस प्रकार के युवक आवश्यक हैं उस प्रकार के युवक आज की शिक्षा पद्धति से निर्माण होना कठिन ही नहीं तो असम्भव है। इसलिये छात्रों में जो गुण एवं संस्कार हम बचपन से निर्माण करना चाहते हैं, उस हेतु योग्य दिनचर्या और कार्यक्रमों की योजना छात्रावासों में की गयी।

दिनचर्या

दिनचर्या का प्रारम्भ होता है, सूर्योदय से पूर्व। छात्र प्रातःस्मरण और एकात्मता स्तोत्र का पाठ करते हैं। जिसके माध्यम से वे अपनी प्रिय भारतभूमि का स्मरण और पूजा के साथ भारतभूमि पर जन्में महापुरुषों का स्मरण कर उन्हें प्रणाम अर्पित करते हैं।

उसके बाद कुछ योगासन – व्यायाम होता है। छात्रावास की व्यवस्था में दिये गये दायित्व वे पूर्ण करते हैं। जलपान के पश्चात का समय विद्यालय की पढ़ाई, भोजन, सायं खेलकूद-व्यायाम के लिए होता है। बाद में हाथ-पैर धोकर वे भगवान के सम्मुख बैठकर भजन-आरती करते हैं। उसके बाद भोजन-पढ़ाई कर रात्रि विश्राम करते हैं। स्थानीय जलवायु एवं विद्यालय के समय आदि के अनुसार कार्य के समय और क्रम में

कुछ परिवर्तन हो सकता है परंतु सामान्यत: दिनचर्या ऊपर लिखित अनुसार ही होती है।

छात्रों के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से व्यक्तित्त्व विकास के सभी पहलुओं पर ध्यान देने का प्रयास किया जाता है। जैसे....

शैक्षणिक विकास

ग्रामों में शिक्षा की जो स्थिति है उसके कारण अनेक छात्र छात्रावास में प्रवेश के समय ही पढ़ाई में पिछड़े होते हैं, वे उचित ढंग से आगे बढ़ें और परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करें इसलिए नियमित गृहपाठ करवाने के साथ ही व्यक्तिगत रूप से उन्हें पढ़ाने (कोचिंग) की व्यवस्था की जाती है। उनको जो विषय कठिन मालूम होते हैं उनकी पढ़ाई का विशेष प्रयास तथा जो कुछ कारणों से कक्षा में पिछड़ गये हैं उन्हें आगे बढ़ाने का प्रयास इस कोचिंग के द्वारा होता है।

कला गुणों का विकास

चित्रकला, गीत-संगीत कला, नृत्य कला, लेखन-भाषण कला आदि में से कोई न कोई कला छात्रों में सुप्तावस्था में होती है। उसका विकास करने का प्रयास छात्रावास में किया जाता है। छात्रावासों में समय-समय पर विविध प्रकार के कार्यक्रम आयोजित होते हैं, जिनके माध्यम से बालक-बालिकाओं के सुसुप्त गुणों का विकास होता है। वर्ष में जब-जब अवकाश मिलता है, विभिन्न प्रशिक्षण वर्गों का आयोजन भी होता है। इन प्रशिक्षण वर्गों में नृत्य, गायन, चित्रकला जैसे कई प्रकार के अभ्यास की व्यवस्था होती है। रायपुर बालिका छात्रावास की बालिकाओं को गायन हेतु विशेष अभ्यास पर विचार हुआ। एक छात्रावास ने अपने बालकों के अक्षर सुधार के लिए विशेष प्रयास किये।

स्वास्थ्य एवं शारीरिक विकास

स्वास्थ्य हेतु आवश्यक है नियमित और पोषण मूल्यों से युक्त आहार। दो समय भरपेट भोजन तथा आवश्यकता के अनुसार १-२ बार जलपान देते समय छात्रों की पसंद और पोषण मूल्य दोनों का विचार किया जाता है।

प्रात: २०-२५ मिनट योगासन, प्राणायाम, सूर्यनमस्कार और शाम को एक घंटा खेल, व्यायाम के कारण छात्र साधारणत: शारीरिक बलसंपन्न बनते हैं। विद्यालय में आयोजित सभी खेल स्पर्धाओं में छात्र प्रथम-द्वितीय क्रमांक प्राप्त करते हैं। अंतर विद्यालयीन प्रतियोगिताओं हेतु चयनित विद्यालय के दल में कल्याण आश्रम के छात्र बड़ी संख्या में होते हैं।

मानसिक विकास और संस्कार

दिनचर्या और कुछ नियमित और सामाजिक कार्यक्रमों द्वारा मानसिक विकास

और संस्कार का प्रयास यह कल्याण आश्रम के छात्रावास की विशेषता है।

देशभक्ति

प्रात:स्मरण, एकात्मता स्तोत्र से स्वाभाविक रूप से मातृभूमि के प्रति भक्ति भावना का संस्कार होता है, देश के महापुरुषों के स्मरण से देश के प्रति श्रद्धा, अभिमान निर्माण होता है। सायं आरती के समय तथा साप्ताहिक बालसभा में महापुरुषों के चरित्र तथा संस्कारक्षम कहानियाँ सुनाई जाती हैं। महापुरुषों की जयंती-पुण्यतिथि तथा स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस पर महापुरुषों का स्मरण कर देश के बारे में अपने स्वयं के दायित्व का चिंतन किया जाता है।

श्रद्धा

'मै अकेला नहीं हूँ' भगवान सदैव मेरे साथ हैं, यह विश्वास संपूर्ण जीवन भर सभी विपरीत परिस्थितिओं में हिम्मत और उत्साह बनाये रखता है। प्रतिदिन होने वाले आरती, भजन द्वारा, उस समय और साप्ताहिक बाल सभाओं में सुनाई गई कथा-कहानियों द्वारा यह विश्वास निर्माण करने का, बढ़ाने का प्रयास होता है। प्रात: स्नान के पश्चात और विद्यालय जाने के पूर्व भगवान को प्रणाम करने का अभ्यास छात्रों से कराया जाता है।

सामाजिक बोध

विभिन्न कथा कहानियों और महापुरुषों के चरित्र द्वारा अपने सामाजिक दायित्व का बोध छात्रों को कराया जाता है। जहाँ संभव है वहाँ पर साप्ताहिक छुट्टी के दिन छात्र आस-पास के ग्रामों में खेलकूद केन्द्र, सत्संग केन्द्र चलाते हैं। लंबी छुट्टियों में ग्राम संपर्क अभियान आयोजित किया जाता है जिसके द्वारा छात्र चुने हुए गावों में जाकर समाज का संपर्क करते हैं, उनके सुख-दु:ख में सहभागी होते हैं, खेलकूद, सत्संग जैसे केन्द्र प्रारंभ करते हैं, सेवा कार्य द्वारा कुछ श्रमानुभव प्राप्त करते हैं। ग्रामों के उत्सव, पूजा, मेलों में छात्र प्रत्यक्ष सहभाग लेकर सेवा कार्य करते हैं। इन सब प्रयासों से सामाजिक परिस्थिति का अनुभव होता है। सामाजिक सेवाकार्य का अभ्यास होने से सामाजिक कार्य में रुचि बढ़ती है।

सामूहिक कार्य-नेतृत्व

छात्रावास की दैनंदिन व्यवस्था में छात्र समिति का प्रमुख सहभाग होता है। छात्रों कों विभिन्न दायित्व सौंपे जाते हैं। छात्रावास में होने वाले वार्षिकोत्सव जैसे कार्यक्रमों के व्यवस्था-संचालन की संपूर्ण जिम्मेदारी छात्रों को दी जाती है। जिससे छात्रों में सामूहिकता (टीम वर्क) की भावना का विकास होकर नेतृत्व गुण भी बढ़ते हैं।

महाविद्यालयीन शिक्षा

अनेक छात्रावासों में १० वीं या १२ वीं तक की शिक्षा की व्यवस्था है। परंतु उसके बाद छात्रों को भाग्य के भरोसे छोड़ नहीं दिया जाता। कुछ छात्रावासों में छात्र जहाँ तक पढ़ सकता है वहाँ तक उसकी व्यवस्था की जाती है। इस समय १४२ छात्र-छात्रायें महाविद्यालय की पढ़ाई कल्याण आश्रम के छात्रावासों में रहकर कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त विदर्भ (महाराष्ट्र) जैसे कुछ प्रांतों में चुने हुये छात्रों को छात्र विस्तारक इस नाते से विभिन्न स्थानों पर भेजा जाता है। जहाँ वे पढ़ने के साथ-साथ सामाजिक कार्य में योगदान देते हैं। अन्य छात्रों को भी यथा संभव मदद देकर-दिलाकर वे अपनी शिक्षा पूर्ण करें, यह प्रयास होता है।

परिणाम

छात्रावास में पढ़ने वाले छात्रों का शैक्षणिक, मानसिक विकास कर उन्हें जीवन में आगे बढ़ाने के प्रयास के सुपरिणाम भी मिल रहे हैं। उदाहरण स्वरूप गोरखपुर छात्रावास का छात्र विलुबो आज दिमापुर (नागालैण्ड) में चिकित्सा कार्य कर रहा है। उसी छात्रावास का छात्र थुम्बई झेलीयांग पी.एच.डी. करने के बाद नागालैण्ड के एक महाविद्यालय में पढ़ाता है साथ ही यह दोनों कल्याण आश्रम के नागालैण्ड इकाई के सचिव-सहसचिव के दायित्व का पालन कर रहे हैं। जशपुर छात्रावास के अनेक भूतपूर्व छात्र शासन के उच्चपदों पर कार्य कर रहे हैं। इसी वर्ष रायपुर की दो छात्राओं को नर्सिंग ट्रेनिंग के लिए नागपुर भेजा गया तो दोनों को लॉ कॉलेज में प्रवेश दिलाया गया। शालान्त परिक्षाओं का फल भी उत्तम रहता है, जैसे इस वर्ष महाराष्ट्र से ७२

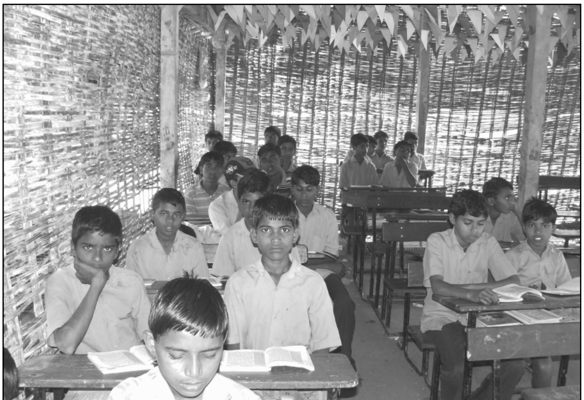

अध्ययन करते हुए वनवासी बालक

छात्रों ने शालान्त परीक्षा दी उसमें से ६८ छात्र उत्तीर्ण हुये। उसमें से २४ प्रथम श्रेणी में और १० विशेष श्रेणी में थे।

महाराष्ट्र के गुही छात्रावास के छात्र मोहन गावीत ने नासिक जिला विज्ञान प्रतियोगिता में घरेलू शीत पेटी (फ्रीज) का निर्माण कर प्रथम क्रमांक प्राप्त किया तो चिंचवली छात्रावास के अनिल वाघमारे, १० वीं कक्षा के इस छात्र ने 'हुतात्मा नाग्या कातकरी' इस मराठी चरित्र पुस्तिका का अपनी कातकरी बोली में अनुवाद किया, जिसका लोकार्पण कल्याण आश्रम के अध्यक्ष मा. जगदेवराम उराँव के शुभ हस्तों से प. पू. सरसंघचालक श्री मोहनजी भागवत की उपस्थिति में हुआ।

कलागुण

खेलकूद विषयों में छात्रों का कर्तृत्व सभी जगहों पर दिखता है। नृत्य, संगीत में भी वे आगे हैं। उदाहरणस्वरूप रायपुर के शबरी कन्या आश्रम का महाराष्ट्र मण्डल द्वारा आयोजित राष्ट्रभक्ति पूर्ण समूह गीत स्पर्धा में करीब – करीब प्रतिवर्ष प्रथम क्रमांक आता है। अन्य दल केवल द्वितीय क्रमांक हेतु स्पर्धा में उतरते हैं। इसी छात्रावास की अनेक छात्राओं ने खैरागढ़ संगीत विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित संगीत परिक्षायें देकर उनमें सफलता पायी है।

सामाजिक मनोभूमिका

कल्याण आश्रम के छात्रों की विशेषता है उनकी सामाजिक मनोभूमिका, जिसके उदाहरण कदम-कदम पर मिलते रहते हैं।

कल्याण आश्रम के छात्रावास की छात्रा कु. प्रतिमा चकमा छुट्टियों में मिजोरम के अपने गाँव गयी। उसने देखा कि ग्राम का विद्यालय बंद है और बच्चे गलियों में खेल रहे हैं। पूछताछ करने पर पता लगा कि विद्यालय की छत खराब होकर जगह-जगह चूती है, इसलिये विद्यालय बंद है। उसने अपने ग्राम की महिलाओं को एकत्र किया और पूछा कि क्या अपने घर की छत खराब होने पर हम घास बिछाकर ठीक नहीं करते हैं ? अब विद्यालय की छत खराब होकर चूती है इसलिये विद्यालय बंद है और बच्चों की पढ़ाई का नुकसान हो रहा है। क्या हम अपने विद्यालय की छत की मरम्मत नहीं कर सकते ? अगले दिन सब महिलायें हसियां लेकर घास काटने जंगल की ओर निकल पड़ी। पुरुषों ने देखा तो पूछताछ की, उनके उद्देश्य का पता लगने पर पुरुषों ने कहा कि केवल मरम्मत करने से काम नहीं चलेगा। पूरी छत बदलनी पड़ेगी, हम लोग बाँस काटकर लाते हैं, आप लोग घास ले आयें, दोनों मिलकर विद्यालय की छत बदल देंगे। २-४ दिनों में नयी छत बन गयी और विद्यालय प्रारंभ हो गया।

ऐसे उदाहरण सब जगह मिलते हैं। छत्तीसगढ़ के काँकेर जिले में संघ के वरिष्ठ

कार्यकर्ता का किसी अभियान हेतु प्रवास हुआ। उन्हें गाँव-गाँव में कल्याण आश्रम के भूतपूर्व छात्र मिले जो अपने ग्राम के सामाजिक कार्य में अग्रणी थे। सभी प्रांतों में कल्याण आश्रम के भूतपूर्व छात्र विभिन्न स्तर पर दायित्व लेकर कार्य कर रहे हैं। कल्याण आश्रम के पूर्णकालीन कार्यकर्ताओं में भी उनकी संख्या है।

इस प्रकार की सामाजिक मनोभूमिका हेतु विशिष्ट प्रयास छात्रावास द्वारा किये जाते हैं। जैसे इस वर्ष छत्तीसगढ़ के ६ छात्रावासों की ३० बालिकायें और ५५ बालक ८६ ग्रामों में गये। ग्रामवासियों से संपर्क किया। उनके सुख-दु:ख में सहभागी हुये और हम एक ही समाज के अंग हैं इस भावना को बल दिया। वनवासी समाज ग्रामों में रहता है। इसलिये वनवासी संपर्क और जागरण का कार्य ग्रामों से ही प्रारंभ होता है। छात्रावास के माध्यम से ग्रामों से जीवंत संपर्क बनता है। जिस परिवार से वह आता है परिवार और उसके माध्यम से ग्राम, कल्याण आश्रम और राष्ट्रकार्य से जुड़ता है। वर्तमान में करीब ४००० ग्रामों के छात्र अपने छात्रावास में हैं।

इसका अर्थ ४००० ग्राम वर्तमान छात्रों के माध्यम से सतत संपर्क में हैं। ३२५०० पूर्व छात्रों के माध्यम से कितने ग्रामों से संपर्क होगा इसका हिसाब लगाना कठिन है।

समरसता का भाव

वनवासी – नगरवासियों के बीच मानसिक दूरी यह एक समस्या है। छात्रावास के माध्यम से इस समस्या के समाधान का प्रयास किया जा रहा है। कई प्रांतों में छात्रों का नगर भ्रमण यह नियमित कार्यक्रम बन गया है। जिसमें ग्रामांचल के छात्रावासों के वनवासी छात्र १-२ दिन के लिये नगर में आकर नगर के विभिन्न परिवारों में परिवार के सदस्य जैसे निवास करते हैं। साधारणत: त्यौहारों के समय यह कार्यक्रम होता है और स्नेह का पाथेय लेकर अपने ग्राम लौटते हैं। इससे नगर के परिवार वनवासी समाज के प्रति अपना प्रेम प्रकट करते हैं तो वनवासी छात्र 'नगर के लोग भी अपने ही' हैं यह भाव लेकर घर लौटते हैं। इससे ही समरसता का भाव निर्माण होता है।

युगों-युगों से एक ही अंचल में रहते हुये भी विभिन्न जनजातियों में परस्पर छुआछूत मानी जाती है। विभिन्न कारणों से जनजातियों में तनाव भी निर्माण होता है। (कभी-कभी कुछ लोग तनाव निर्माण करने का और बढ़ाने का प्रयास भी करते हैं) छात्रावास में कई जनजातियों के बच्चे एक साथ रहते हैं। गोरखपुर, रायपुर छात्रावास में २४-२४ जनजातियों के बच्चे हैं। एक दूसरे को समझते हैं, एक दूसरे की भाषा सीखते हैं और एक दूसरे की बोलीभाषा के गीत भी गाते हैं। जिससे परस्पर स्नेह और सामंजस्य का भाव निर्माण होता है। वर्तमान में कल्याण आश्रम के छात्रावासों में १५७ जनजातियों के छात्र हैं जिसमें से ४९ उत्तर पूर्वांचल की जनजातियाँ हैं। इसलिये

इस स्नेह-सामंजस्य के वातावरण का प्रभाव भारत के सभी वनवासी क्षेत्रों पर पड़ रहा है।

राजस्थान के एक छात्रावास में दो जनजातियों के छात्र हैं। दोनों में छुआछूत की प्रबल भावना थी। वे एक-दूसरे के साथ भोजन नहीं करते थे। खाना बनानेवाली महिला, बननेवाला भोजन दो भागों में बाँटकर उन्हें देती थी। पानी के मटके, ग्लास-बरतन सब अलग अलग थे। इतना ही नहीं तो शौच जाने के डिब्बे भी अलग-अलग रखे जाते थे। परंतु बच्चों ने देखा कि अन्य लोग तो छुआछूत नहीं मानते। साथ में रहने के कारण स्नेह की भावना बढ़ने लगी और एक दिन बच्चों ने घोषणा की कि आज से छुआछूत समाप्त – हम सब एक साथ बैठकर भोजन करेंगे। कुछ भी न बोलते हुए, कोई भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष दबाव न डालते हुये, वातावरण के प्रभाव से छुआछूत स्वयमेव समाप्त हुई। स्नेह का बंधन निर्माण हुआ। सभी प्रकार की गलतफहमियाँ दूर हुईं। आज उसी छात्रावास का वातावरण देख कोई कह नहीं सकता कि कभी वहाँ छुआछूत की समस्या थी।

इस प्रकार वनवासी समाज के सर्वांगीण विकास हेतु कटिबद्ध ऐसे कार्यकर्ता खड़े करने के मार्ग पर कल्याण आश्रम के छात्रावास सफलतापूर्वक आगे बढ़ रहे हैं और उसके परिणाम भी प्रत्यक्ष दिख रहे हैं।

समरसता का अनुभव

उत्तर पूर्वांचल हेतु योजना

उत्तर पूर्वांचल की विशिष्ट परिस्थिति के कारण उस क्षेत्र हेतु विशेष योजना बनानी पड़ी। वहाँ के अशांत वातावरण में शिक्षा हेतु अनुकूल परिवेश बनना असंभव लग

रहा था। अलगाववादी आतंकवादी परिवेश का प्रभाव बच्चों की मानसिकता पर भी पड़ रहा है। इसलिये उत्तर पूर्वांचल के छात्रों हेतु भारत के अन्य प्रांतों में छात्रावास प्रारंभ करने की योजना बनी। बालकों हेतु गोरखपुर, कानपुर, सहारनपुर, भिवानी, दिल्ली आदि स्थानों पर तथा बालिकाओं हेतु रायपुर, रुद्रपुर आदि स्थानों पर छात्रावास चलायें जा रहे हैं।

इसका फल भी मिल रहा है। राष्ट्रवादी वातावरण में शिक्षा पाने के कारण बच्चों में राष्ट्रभक्ति की भावना निर्माण हुई। शिक्षा समाप्त कर (या छुट्टियों में) घर जानेवाले बच्चों की मानसिकता का प्रभाव समाज की मानसिकता पर पड़ा। अनेक जनजातियों से कल्याण आश्रम के कार्यकर्ताओं का संबंध बना। धीरे-धीरे उत्तर पूर्वांचल के लिये चलने वाले छात्रावासों की संख्या बढ़ी। वर्तमान में उत्तर पूर्वांचल के बाहर उत्तर-पूर्व की करीब ४०० छात्र-छात्रायें शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं तो उत्तर पूर्वांचल में चलने वाले २२ बालक और ८ बालिका छात्रावासों में ५८६ बालक एवं १७४ बालिकायें शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। वर्तमान समय में उत्तर पूर्वांचल की ४९ जनजातियों के छात्र कल्याण आश्रम के छात्रावास में पढ़ रहे हैं।

उत्तर पूर्वांचल के आतंकवादी – अलगाववादी वातावरण में भी सामान्य जनता में राष्ट्रप्रेम की मानसिकता बन रही है - बढ़ रही है, इसमें कल्याण आश्रम का बहुत बड़ा योगदान है। कल्याण आश्रम के वर्तमान और भूतपूर्व छात्र वहाँ राष्ट्रभक्ति का वातावरण तैयार कर रहे है।

और भी कुछ उदाहरण

उत्तर पूर्वांचल की अशांत परिस्थिति और सीमांत क्षेत्र के कारण सुरक्षा दलों के शिविर जगह जगह स्थापित हैं। सुरक्षा दलों के अधिकारी स्थानिक समाज से संपर्क प्रस्थापित करने का प्रयास करते हैं। अपने संसाधनों का कुछ हिस्सा स्थानिक विकास हेतु व्यय करने की उनकी इच्छा रहती है। परंतु कभी-कभी स्थानिक समाज में उनके बारे में अलग प्रकार की धारणायें होती हैं। भाषा की समस्या के कारण भी वे स्थानीय समाज से संपर्क नहीं कर पाते। मणिपुर के थोबाल जिले के 'मची' ग्राम में भी यह स्थिति थी। परंतु उसमें परिवर्तन हुआ रायपुर छात्रावास की दो छात्राओं के कारण।

रायपुर छात्रावास की दो छात्रायें छुट्टियों में अपने घर मची आयी थीं। बाजार में मिलीं तो हिन्दी में बात करने लगीं। एक सुरक्षा अधिकारी ने उनके मुख से हिन्दी सुनी तो उनको एक बड़ी समस्या का समाधान मिला। इन छात्राओं के माध्यम से उन्होंने ग्राम के प्रमुख लोगों से संपर्क किया। समझाया कि हम आपके शत्रु नही हैं, आपकी सुरक्षा हेतु हम यहाँ पर हैं। धीरे-धीरे संबंध सुधरने लगे। ग्रामवासियों का सुरक्षा

शिबिरों में एवं सैनिकों का ग्राम में आना-जाना प्रारंभ हुआ। सुरक्षा दलों द्वारा ग्राम विकास के कार्य किये गये। ग्राम की महिलाओं हेतु सुरक्षा अधिकारियों के परिवार की महिलाओं ने फल प्रशिक्षण, जैम-जैली बनाने के प्रशिक्षण आयोजित किये - उस क्षेत्र में अनन्नास बहुत बड़े प्रमाण में पैदा होता है। परंतु उसका मूल्य नहीं मिलता इसलिये इस प्रशिक्षण में इन दो छात्राओं ने दुभाषियों का कार्य किया। कुछ भी स्थानीय समस्या आने पर समाधान हेतु सुरक्षा अधिकारी इन दोनों छात्राओं को ले जाते थे। इन दोनों की मातायें भी रायपुर की माँ इस नाम से जानी जाने लगीं। ग्राम में उनका सम्मान बढ़ा।

- पुरुलिया जिले के मानिकाड़ी में आने जाने का रास्ता नहीं था। कुछ असंभव सा लग सकता है, परन्तु हमें यह बताते हुये गौरव की अनुभूति होती है कि कल्याण आश्रम के भूतपूर्व छात्रों ने पहाड़ काटकर रास्ता बनाया।

- बांदवान छात्रावास का भूतपूर्व छात्र एक अस्पताल में चिकित्सक बन के आया तो अस्पताल के वातावरण में बड़ा अंतर आया। वनवासी की पूछताछ होने लगी। उनकी समस्याओं का सहानुभूति से विचार होने लगा।

- छात्रावास से संस्कार पाकर अपने कार्य में लगे भूतपूर्व छात्र अपने संस्कारों का उपयोग जीवन में करते हैं। मल्लारपुर छात्रावास का भूतपूर्व छात्र एक विद्यालय में शिक्षक इस नाते से लगा। उस विद्यालय के शिक्षक पढ़ाने के अलावा बाकी सब कुछ करते थे, पढ़ाई का वातावरण ही नहीं था। इस छात्र के प्रयास से विद्यालय में पढ़ाई का वातावरण तैयार हुआ। शिक्षक पढ़ाने लगे। परीक्षा फल ठीक हुआ।

शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक बच्चे का अधिकार है। इस हेतु कानून भी बना है। परन्तु सारे काम कानून बनाने मात्र से पूर्ण नहीं होते। उस हेतु सामाजिक प्रयासों की भी आवश्यकता रहती है। अतीत की ओर देखें तो पता चलता है की भारत में शिक्षा समाज आधारित ही थी। राजा-महाराजों के सुपुत्रों को भी महलों को छोड़ गुरूकूल में जाकर शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती थी।

आज भी कई व्यक्ति व संस्थाएँ केवल शिक्षा क्षेत्र में ही योगदान दे रही है। कल्याण आश्रम भी वनवासी क्षेत्र में इस हेतु कार्यरत है। कार्य का स्वरूप देखते हुए, कई अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। आईये ! वनवासी विकास के इस गोवर्धन पर्वत को उठाने में अपनी भी एक लकड़ी को सम्पूर्ण शक्ति के साथ ऊपर उठायें, भगवान जो साथ में है।

■

चिकित्सा

वनवासी समाज की सर्वाधिक मर्मान्तक पीड़ा यह है कि बीमारी की अवस्था में दूर-दूर तक चिकित्सा सेवा की कोई व्यवस्था नहीं होती है । जंगल के परिवेश एवं कुपोषण के कारण कुछ बीमारियों के व्यापक प्रभाव से यह वनवासी समाज ग्रसित रहता है और ऐसी परिस्थिति में या तो वह अन्धविश्वास का शिकार होकर अपनी जमीन को गिरवी रखने के लिए बाध्य हो जाता है या फिर किसी पादरी के द्वारा दी जानेवाली एक गोली के बदले क्रॉस पहनकर धर्मान्तरित हो जाता है । इस समस्या के समाधान हेतु परम् पूजनीय श्री गुरुजी ने नागपुर से १९६४ में वैद्य नारायण राव पुराणिक को जशपुर भेजा, जिन्होंने वहाँ दवाई देना एवं मरीजों को देखना प्रारम्भ किया । इसको हम कल्याण आश्रम में स्वास्थ्य सेवा का श्रीगणेश मान सकते हैं । इस चिकित्सा केन्द्र का विधिवत उद्घाटन मध्य भारत के सुप्रसिद्ध वैद्य पंडित रामनारायणजी शास्त्री के कर कमलों से हुआ । १९७१ में श्री एकनाथ गोरे (जो बाला साहब के मित्र थे) ने दो एम्बुलेंस लंदन से जशपुर भिजवाई । इसी प्रकार झारखण्ड में १९७० में लोहरदगा अस्पताल का प्रारम्भ तब के बिहार के प्रचारक श्री शिवशंकर तिवारी के प्रयासों से संपन्न हुआ था, जिसमें नागपुर के डॉक्टर

शिलेदार दम्पत्ति द्वारा विधिवत इलाज प्रारम्भ किया गया था।

१९७८ में जब कल्याण आश्रम का अखिल भारतीय स्वरूप बना तब कई चिकित्सकों का आगमन कल्याण आश्रम में हुआ जिनके द्वारा बिहार, उड़ीसा, बस्तर, उत्तर पूर्वांचल में कार्य का विस्तार हुआ।

डॉ. विश्वामित्र ने बस्तर में एक पेड़ के नीचे मरीजों को देखना प्रारम्भ किया था। बारसूर नामक स्थान पर माधव चिकित्सालय आज भी सेवारत है। यूँ तो कल्याण आश्रम की बगिया में अनेक फूल खिले जिनकी सेवा की महक से पूरा वनक्षेत्र आल्हादित हो उठा। जगह-जगह सम्मेलन होने लगे। अनेक प्रकल्पों का जन्म हो गया। अपनों के लिये कष्ट सहकर सेवा करने वाले चिकित्सकों को सफलता मिली। प्रारम्भ के चिकित्सकों ने व्यापक जनसंपर्क किया तथा उन्होंने मरीजों को देखने के साथ-साथ संगठन का भी कार्य किया।

गुमला में डॉ. घोष गुरु एवं डॉ. शिवनारायण पाठक का नाम आज भी झारखण्ड में श्रद्धा से याद करते हैं। तब जब कि कल्याण आश्रम में साधन भी कम थे, गाँव में पैदल ही जाया करते थे। उड़ीसा में डॉ. रामगोपाल जी व हिमाचल के डॉ. राजीव बिंदल ने वर्षों तक सेवा की। आज डॉ. रामगोपालजी कल्याण आश्रम के क्षेत्रीय संगठन मंत्री हैं।

डॉ. शुभांगी जोशी, डॉ. शशि ठाकुर ने भी वर्षों तक उत्तर पूर्व में सेवा का कार्य किया। डॉ. शुभांगी नेने ने बस्तर, उत्तर पूर्व और महाराष्ट्र में कार्य किया। गाँव में स्वास्थ्य प्रदर्शनी लगाने का कार्य भी उन्होंने किया। इसी प्रकार जशपुर में डॉ. राजेंद्र पाठक, डॉ. मृगेन्द्र सिंह ने वर्षों तक कार्य किया तथा मृगेन्द्र सिंह तो २९ साल से लगातार कार्य में हैं। कुछ स्थानों पर विशेष प्रयोग हुये जो निम्न हैं।

मानव के साथ पशु चिकित्सा

जशपुर के पास छतौरी ग्राम की बात है जब हमारे अखिल भारतीय चिकित्सा प्रमुख डॉ पंकज भाटिया कैम्प के लिए वहाँ एक घर में गये तो घरवाले बोले कि हमलोग तो ठीक हैं पर बकरी को खुजली हो गयी है। भाटिया जी ने स्केबीज का लोशन दे दिया। अगली बार जब गये तो सब अपनी-अपनी बकरियों को ले आये। फिर बाद में वहाँ पशु चिकित्सकों को भेजा गया।

विवेकानंद मेडिकल मिशन

केरल में मुत्तिल नामक स्थान पर कल्याण आश्रम के तत्कालीन अखिल भारतीय संगठन मंत्री श्री भास्कर राव ने एक अलग समिति बनाकर विवेकानन्द

मेडिकल मिशन प्रारम्भ करवाया जिसमें डॉ. सगदेव १९८५ से अपनी सेवायें सपरिवार प्रदान कर रहे हैं। उसमें सन २००० से डॉ. अनुज सिंघल और डॉ. तारा भी जुड़ गये हैं। सिकिल सैल एनीमिया (जो कि वनवासी क्षेत्रों में पाया जाने वाला एनीमिया है) पर वहाँ व्यापक कार्यक्रम चल रहा है। यहाँ पर मरीजों के इलाज के साथ-साथ उनके पुनर्स्थापन के लिये बाँस से बनी चीजों की ट्रेनिंग भी दी जाती है।

बिरसा सेवा सदन (लोहरदगा)

१९७० से प्रारंभ होकर लोहरदगा क्षेत्र जो कि झारखण्ड का नक्सल प्रभावित क्षेत्र है, वह वर्षो से कल्याण आश्रम की गतिविधियों का केन्द्र बना हुआ है। इस केन्द्र के द्वारा प्रतिवर्ष सर्जरी कैम्प व General Medical Camps, Eye Camps आयोजित किये जाते हैं। इस केन्द्र में ही डॉ. सुरेंद्र शर्मा ने १७ वर्ष अपनी सेवायें दी, जिनका अभी कुछ समय पहले असमय निधन हो गया। स्वास्थ्य समस्यायें वनवासी क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों से कुछ मिलती जुलती सी हैं, बस पहुँचने का कई स्थानों पर अभाव है।

मुख्य रूप से शुद्ध पीने के पानी की अनुपलब्धता और मौसमी बीमारियों के कारण वनवासी परेशान रहते हैं। उल्टी, दस्त, मलेरिया, खुजली, खून की कमी आदि बीमारियों से पीड़ित रहते हैं।

कुपोषण जनित बीमारियां भी काफी मात्रा में पायी जाती हैं। रतौंधी, रिकेटस, स्कर्वी आदि बीमारियां प्रचुर मात्रा में लोगों के अज्ञान व धनाभाव का प्रतिफल हैं।

कुपोषण की समस्या - हमारे प्रयास

वनवासी क्षेत्र में विषेशत: बस्तर (छत्तीसगढ़), उडीसा, महाराष्ट्र जैसे राज्यों में कुपोषण एक समस्या है। कुछ समयपूर्व, माता एवं बालक का वजन कम होना, कृष शरीर, आहार के अभाव में मृत्यु जैसे कई किस्से सुनने को मिलते थे। स्वास्थ्य के सन्दर्भ में कार्यरत विदर्भ (महाराष्ट्र) के कार्यकर्ताओं ने एक योजना बनाई। मेलघाट (महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र) में कुपोषित परिवारों के लिये नियमित रूप से आरोग्यवर्धक ऐसा 'सत्तु' का वितरण किया। डॉक्टर पट्टलवार एवं साथी चिकित्सकों ने सातत्यपूर्ण प्रयास किये। ऐसी आत्मीयता निर्माण हुई की सुदूर वनवासी गाँवों के लोग डॉ पट्टलवार जी को 'वनवासी बाबा' कहने लगे। समय चलते परिणाम मिला। अधिकांश परिवार कुपोशण से मुक्त हुये। अति पिछड़ी जाति (Primitive Tribe) के रूप में मेलघाट मे रह रहे कोरकु जनजाति में

स्वास्थ्य सेवा का कार्य आज भी चल रहा है।

महाराष्ट्र के नंदुरबार-नाशिक जिलों में भी कुपोषण की समस्या के समाधान हेतु ऐसे ही प्रयास चले। ९० दिन तक पौष्टिक आहार के रूप में परिवारों में 'लड्डु' का वितरण हुआ। ५६००० लड्डु वितरीत हुये। लाभार्थी ७१ माता एवं ६७५ बच्चों को इस पौष्टिक आहार के वितरण के परिणाम स्वरूप परिस्थिति में सुधार देखने को मिले।

जड़ी बूटियों का पुस्तक प्रकाशन

जड़ी बूटियों का ज्ञान तो इन क्षेत्रों में भरा पड़ा है। आवश्यकता है इस ज्ञान को इकठ्ठा करके सत्यापित करने की। जिसके लिये आयुर्वेद में काफी कार्य किया गया है, पर जानकार लोगों की इन वन क्षेत्रों में कमी ही मुख्य समस्या है। वारली जनजाति के अग्रणी एवं महाराष्ट्र प्रांत के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री आवारे गुरुजी भी जड़ी बूटियों के जानकार थे। उन्होंने एकत्रित की हुई जानकारी के आधार पर महाराष्ट्र प्रांत ने एक मराठी पुस्तिका का प्रकाशन किया है।

स्वास्थ्य शिबिर

इसी के साथ वनवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य जागरण की भी आवश्यकता है। उसके कारण भी बहुत सी बीमारियां नहीं होती हैं। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर विभिन्न राज्यों में डॉक्टर्स से सम्पर्क करके स्वास्थ्य शिविरों का व्यापक रूप से आयोजन किया जाता है, जो विभिन्न प्रकार के होते हैं।

स्वास्थ्य शिबिर

१. सामान्य स्वास्थ्य शिविर - ये सर्वाधिक संख्या में पूरे देश में नगर में रहने

वाले चिकित्सकों के माध्यम से वनवासी क्षेत्र में लगाये जाते हैं।

२. सर्जिकल कैम्प - इसमें विभिन्न प्रकार के आपरेशन बहुत मामूली खर्चे में या मुफ्त किये जाते हैं। जैसे हाइड्रोक्सिल, बवासीर व मोतियाबिन्दु सर्जरी कैम्प। पिछले दिनों बस्तर में भारी मात्रा में बवासीर पायी गयी जिसमें डॉ. अशोक काले के प्रयासों से क्षार सूत्र पद्धति से सफल इलाज शिविर लगे। अब बस्तर में प्रत्येक ब्लॉक में इस प्रकार के शिविर सरकार के साथ मिल जुल कर लगाने का प्रयास चल रहा है।

३. पेट के कीड़ों की दवाई, मलेरिया की दवा व बिटामिन 'ए' वितरण शिबिर - यह झारखण्ड व जशपुर क्षेत्रों में लगाये गये हैं।

४. पौष्टिक आहार सम्बन्धित शिविर - विदर्भ प्रांत ने कुपोषण की समस्या के समाधान हेतु शिविरों का आयोजन किया। इन शिविरों में पौष्टिक आहार के रूप में 'सत्तु' का वितरण हुआ।

- इन शिविरों में स्वास्थ्य चर्चा व स्वास्थ्य के सन्दर्भ में आवश्यक जानकारियाँ भी दी जाती हैं।

- उक्त व एनीमिया (सिकिल सैल) के बारे में ऐसी ही चर्चायें केरल एवं जशपुर में की जाती हैं।

- विभिन्न क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदा आने पर भी शिविर लगाये जाते हैं जैसे बिहार, असम में बाढ़ आने पर व उड़ीसा में तूफान आने पर एवं अण्डमान में सुनामी आने पर में अपने चिकित्सक वहाँ छह माह रहकर आये थे।

स्वास्थ्य रक्षक योजना

विभिन्न शिविरों के माध्यम से दूर दराज के वनवासी क्षेत्रों में राहत तो मिलती है पर स्थायी व्यवस्था नहीं हो पाती है। इसी कमी को दूर करने के लिये स्वास्थ्य रक्षक योजना को प्रारंभ किया गया। जिसमें गाँव में रहने वाले व्यक्ति को छाँटकर ट्रेनिंग दी जाती है। उसके बाद डब्लू. एच ओ. द्वारा अनुमति प्रदान की हुई दवाइयों का बक्सा उसको दिया जाता है तथा जिसमें आवश्यकतानुसार मासिक बैठकों में दवाइयाँ भर दी जाती हैं। वर्ष में एक बार इन स्वास्थ्य रक्षकों को प्रशिक्षण भी दिया जाता है। पूरे देश में कल्याण आश्रम द्वारा लगभग २५१७ स्वास्थ्य रक्षकों को प्रशिक्षित करके यह योजना चलाई जा रही है। महाराष्ट्र प्रांत ने इस सन्दर्भ में एक सी.डी. बनवाई है। स्थान-स्थान पर उसे दिखाने के कार्यक्रम किये। प्रत्येक स्वास्थ्य योजना की धुरी सब प्रांतों में अपने पूर्णकालिक चिकित्सक हैं जो विभिन्न

शहरी समितियों व विभिन्न चिकित्सकों के सहयोग से शिविर व स्वास्थ्य रक्षक योजना चलाते हैं । चिकित्सक जहाँ रहते हैं ऐसे लगभग ४० दैनिक केन्द्र वहाँ चलाते हैं एवं साप्ताहिक रूप से उपकेन्द्र भी चलाते हैं । ऐसे २५१ दैनिक एवम् साप्ताहिक चिकित्सा केन्द्र भी चलाये जाते हैं । पिछले वर्ष कल्याण आश्रम द्वारा पूरे देश में १२ लाख से अधिक मरीजों की सेवा की गयी ।

ग्रामीण स्वास्थ्य रक्षक

बदलाव

बाला साहब देशपांडे बताते थे कि जशपुर में दवाखाना खोला गया तो वनवासी आने से डरते थे । विभिन्न प्रकार की भ्राँतियां थीं पर आज की स्थिति यह है कि जहाँ स्वास्थ्य शिविर लगते हैं या अपने केन्द्र चलते हैं वहाँ भीड़ बहुत होती है । इस प्रकार पूरे वनवासी क्षेत्र में जागरण का काम, वो भी स्वास्थ्य के लिये जागरण का कार्य अपने चिकित्सकों ने जो नि:स्वार्थ सेवा की है, उससे बना है ।

अति पिछड़ी वनवासी जाति पहाडी कोरबा है । यह पीटीजी में आते हैं जो देश में १५ लाख हैं । इनको खेत का ज्ञान भी मुश्किल से है । ऐसे ही ३० गाँवों के समूह के बीच पिछले साल अपने डॉ. रवि ने बरसात के दिनों में ३ माह बिना बिजली के रहकर बिताये । उनके रहने से उस क्षेत्र में दस्त, उल्टी की बीमारी रूक सी गई ।

- महाराष्ट्र प्रांत के स्वास्थ्य रक्षकों ने प्रत्येक वर्ष फलदार वृक्षों को लगाने का संकल्प लिया है जो बरसात के दिनों में पूरा करते हैं ।

- राजस्थान में विभिन्न स्थानों पर खुजली निवारण शिविर लगाये गये जिससे उस क्षेत्र से खुजली लगभग चली ही गयी। कोटड़ा के आस पास टी.बी. के ऊपर विभिन्न योजना ली गयी। आज साप्ताहिक क्लिनिक चलाया जाता है जिससे उस क्षेत्र में राहत मिली है।

- पत्थलगाँव (छत्तीसगढ़) क्षेत्र के ४ स्वास्थ्य रक्षकों ने मिलकर स्वास्थ्य सेवा के साथ-साथ कई काम किये। परिणामस्वरूप ग्रामवासियों में जागरण देखने को मिला। स्वधर्म के प्रति जागृत समाज ने श्रद्धास्थानों का निर्माण किया।

- जशपुर क्षेत्र में विटामिन 'ए' की गोलियाँ बच्चों को देने से रतौंधी की बीमारी में कमी आई। रक्तदान के बारे में भी जागृति आई है। पिछले सालों में जशपुर के युवकों ने लगभग ६०० रक्त की बोतलें दान की है।

- कुछ स्थानों पर होमियोपैथिक एवं आयुर्वेदिक दवाइयों का उपयोग किया जाता है। परंतु जहाँ इन दवाइयों के प्रति जब वनवासी समाज का विश्वास नहीं जम पाता वहाँ एलोपैथिक औषधियों का उपयोग किया जाता है। कल्याण आश्रम की मान्यता है कि गाँव में पायी जाने वाली समस्त बीमारियों के निदान के लिए प्रकृति माँ ने निकटवर्ती क्षेत्रों में अनेक जड़ी-बूटी पैदा की है। ग्राम स्वास्थ्य योजना के स्थायी हल के लिये उनके उपयोग के योग्य प्रशिक्षण देकर घरेलू दवाइयों के उपयोग को प्रोत्साहन देना ही हमारी कल्पना है।

- पूरे वनवासी समाज में जो एक सरलता और भोलापन है, उसको ध्यान में रखकर उनके कष्टों को दूर करने के लिये सहृदय चिकित्सकों की आवश्यकता है और वह बहुत बड़ी है। हम ऐसे लोगों को ढूँढ कर इस क्षेत्र में सेवा करने का मौका दे पायें, यही समय की आवश्यकता है।

■

कल्याण आश्रम द्वारा सेवाकार्य

आपदा, वह चाहे प्राकृतिक हो या मानवनिर्मित, दोनों ही विनाश की ओर ले जाती है। मानव से लेकर प्राणिमात्र तक सब सहायता के लिये जब निहार रहे हो, ऐसे समय सहायता करना इस भूमि के संस्कार है। वनवासी कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता भी जब कभी आपदा आई, सहायता के लिये सदैव अग्रसर रहे है।

कुछ समयपूर्व बिहार में कोशी नदी में आई बाढ़ के समय भी कल्याण आश्रम ने सेवाकार्य किया था। कार्यकर्ताओं ने अपने ज़ान की बाज़ी लगाकर कई लोगों को सुरक्षित स्थानों पर लाया, सहायता शिविर आयोजित किये, चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराई। ९ जिलों में आयोजित निरंतर सामुहिक भोजन में ५००० से अधिक व्यक्तियों ने भोजन किया। ११ जिलों के १९४ गाँवों के २४८९० परिवारों को राहत सामग्री का वितरण किया। २० हज़ार साडियाँ, ५ हज़ार तीरपाल, १५ हज़ार स्वेटर, ७७५० परिवारों को सहायता सामग्री की कीट वितरीत हुई।

संकट में फसे व्यक्तियों को जब सहायता मिली तो सभी के चेहरे पर आनंद था और कार्यकर्ताओं के मुख पर संतोष।

ऐसा ही सेवाकार्य असम एवं आंध्रप्रदेश में भी जब बाढ़ आई, अण्डमान में जब सुनामी आई तब कार्यकर्ताओं ने किया। रीयांग जनजाति के अपने बन्धु जब विस्थापित हुए तब कल्याण आश्रम ने ही उन्हें विविध प्रकार की सहायता करते हुए उनका मनोबल बढ़ाया था। उदालगुड़ी गाँव में हुई घटना के पश्चात भी जिन बन्धुओं को सुरक्षा शिविरों में निवास करना पडा उन्हें भी कार्यकर्ताओं ने विविध रूप में सहायता की।

कार्यकर्ता जब्र ऐसा कोई सेवाकार्य करते है, तब समाज़ का सहकार्य भी उत्साहवर्धक होता है। नि:स्वार्थ मन से किये प्रयासों के पिछे समाज़ सदैव खड़ा है, इसमें कोई संदेह नहीं।

महिला कार्य

भारतीय संस्कृति में सृजनशील महिला शक्तिस्वरूपा है। भारतीय नारी न केवल पुरुष का जीवनभर साथ देती है, परन्तु सम्पूर्ण परिवार के आधार के रूप में अपना कर्तव्य भी निभाती है। परिवार की तरह समाज में भी उसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। वनवासी समाज जीवन में भी महिलाएँ कहीं पीछे नहीं हैं। परिवार के सारे कामों को सम्हालते हुए घर की कृषि एवं पशुपालन के काम की ओर भी वे ध्यान देती हैं। वन में जाना, लकड़ी एवं वन उपज एकत्रित करना, साप्ताहिक बाज़ार में जाकर उसे बेचना, घर की आवश्यकतानुसार खरीदी करना, जैसे कई प्रकार के काम महिलाएँ प्रतिदिन करती हैं। परिवार के साथ-साथ सामाजिक कार्य में भी वे सक्रिय हैं। समाज में होनेवाले उत्सव, धार्मिक कार्यक्रम, गाँव में चलनेवाले विविध कार्यों में महिलाएँ आगे रहकर कार्य करती हैं। कहीं-कहीं पर तो महिलाओं की अनिवार्यता को देखते हुए उसे केन्द्र में रखकर विचार होता है।

वनवासी कल्याण आश्रम की स्थापना से ही वे कार्य से जुड़ी थीं, परन्तु सुश्री लीलाताई पराडकरजी के आगमन के पश्चात महिला कार्य के रूप में योजना बनी। वे हमारे कार्य में प्रथम महिला पूर्णकालीन कार्यकर्ता के रूप में सन् १९७३ में

जशपुर आई। पश्चात वर्तमान झारखण्ड के लोहरदगा में एक डॉक्टर दम्पति के आते एक और महिला कार्यरत हुई। धीरे-धीरे कार्य आगे बढ़ता गया। दिल्ली में सन् १९८१ में आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में भी २५० बहनें सहभागी हुई थीं। अब ग्रामीण क्षेत्र के साथ-साथ नगरीय क्षेत्र में भी महिला कार्य का प्रारम्भ हुआ।

अपना प्रथम महिला छात्रावास जशपुर में प्रारम्भ हुआ। पश्चात प. बंगाल के पुरलीया तथा उसके पश्चात रायपुर, भानपुरी जैसे कई स्थानों पर महिला छात्रावास प्रारम्भ हुए। शिक्षा के प्रति महिलाओं में रुचि बढ़ी। इसके चलते कल्याण आश्रम के कार्य में पूर्णकालीन महिला कार्यकर्ता कार्यरत होने लगी। जहाँ कहीं सामाजिक परिवर्तन आया उसमें महिला छात्रावास का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

विविध प्रकार के आयामों के माध्यम से बालवाड़ियाँ, संस्कार केन्द्र, सत्संग केन्द्र जैसे छोटे छोटे प्रकल्पों का संचालन करने से महिला समिति की सक्रियता बढ़ने लगी। सन् १९८५ में उद्योगनगरी भिलाई में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन का आयोजन हुआ। देश भर से १२०० महिला कार्यकर्ता आई थीं। वनवासी क्षेत्र में कार्य करने निकली सभी महिला प्रतिनिधियों को राष्ट्र सेविका समिति की वंदनीय ताई आपटे का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। इस सम्मेलन में नागालैण्ड से रानी माँ गाईडिन्ल्यू तथा महाराष्ट्र से श्रीमती अनुताई वाघ अतिथि के रूप में उपस्थित थीं।

प्रकल्प चलाने से लेकर ग्राम जागृति के प्रयास करने तक तथा संगठित होकर समस्या का निराकरण करने से लेकर अधिकार के लिए लड़ने तक, सभी प्रकार के कार्य करना महिला जानती है। समाज का विकास करने की क्षमता निर्माण करना अपने कार्य का अंग है, जैसे कई विषयों पर इस सम्मेलन में चर्चा हुई। सहभागी महिलाओं ने अपने-अपने क्षेत्र के अनुभवों का आदान प्रदान किया।

जागरण

जनशिक्षा, स्वास्थ्य, स्वावलम्बन जैसे सभी प्रकार के कार्यों में महिलाएँ सारे भारत में कार्यरत हैं। ग्राम समितियों से लेकर नगर समिति तक एवं सभी स्तर पर संगठन में वे अपनी सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। इसके चलते स्थान-स्थान पर जागरण हो रहा है।

ये रहे कुछ प्रेरक अनुभव

असम प्रान्त के पर्वतीय क्षेत्र में चिकित्सा कार्य में कार्यरत अपनी एक महिला कार्यकर्ता के कारण आसपास के क्षेत्र में जागरण हो रहा था। मैदानी क्षेत्र में बांगलादेशी घुसपैठी अपने हाथियों के साथ केवल जंगल की लकड़ी ढोने का कार्य करते थे, ऐसा नहीं परन्तु उनके कारण सारे क्षेत्र में आतंक का वातावरण था।

हाथियों के चलते पहाड़ों की झुम खेती को नुकसान पहुँचाना, स्थानीय समाज पर अत्याचार करना, युवतियों से छेड़छाड़ करना, उन्हें भगाकर ले जाना, जैसा कई बार होने लगा । वे अपनी मनमानी करते थे । एक बार ऐसा हुआ कि एक महावत दो महिलाओं के पीछे पड़ा । परिस्थिति को देख एक महिला भाग निकलने में सफल हुई । परन्तु दूसरी को महावत ने चाकू दिखाया । महिला ने बहादुरी के साथ उसके हाथ का चाकू छीन लिया । संघर्ष के कारण वह महिला लहूलुहान हो गई । अपने कार्य के कारण वहाँ की महिलाओं में जागृति आई थी । उन सभी ने एकत्रित होकर महावत से उस महिला की चिकित्सा के लिए ५०००/- रु. की माँग की । महावत केवल ५००/- रु. दे रहा था । विरोध तीव्र होता गया । अंत में ५०००/- रु. देना पड़ा । उसी गाँव के एक बड़े घर में ३०० महावत और २०० हाथियों का निवास था । एक दिन सभी महिलाओं ने मिलकर उसे घेर लिया और कहा कि आधे घण्टे में आप यहाँ से हाथी लेकर चले जायें, नहीं तो हम सारा घर जला देंगे । महिलाओं का दुर्गा रूप देखकर सभी महावत अपने हाथी लेकर चुपचाप चले गए ।

बस्तर जिले में अपने द्वारा छोटे छोटे सिलाई केन्द्र चल रहे हैं । इसके लिए सरकारी योजना की सहायता लेने पर विचार हुआ । ऐसी महिलाओं के लिए सरकार रु. २५०/- स्टाइपेण्ड देती है । पंचायत के आदमी ने महिलाओं में शिक्षा के अभाव को देख उनसे अंगूठा लगवा कर २५० रु. के बदले १०० रु. देता था । एक बार एक पढ़ी लिखी महिला ने उसका पत्रक देखने के लिए माँगा, पहले तो उसने मना कर दिया, परन्तु बाद में देते ही आर्थिक गड़बड़ी का पता चला । इस अन्याय के सामने सभी महिलाओं ने एकत्र होकर आवाज उठाई । उसके विरुद्ध शिकायत करने की बात चली तो उसने सबकी माफी माँगते हुए सारे पैसे वापस कर दिये ।

तमिलनाडु में छुआछूत की समस्या पुरानी है । वहाँ करमुंदराई गाँव में अपने महिला कार्यकर्ताओं ने दीपपूजा प्रारम्भ की । श्रद्धाजागरण के इस प्रयास के कारण गाँव की महिलायें संगठित होने लगीं । धार्मिक वातावरण के कारण धीरे-धीरे इस छुआछूत की समस्या का समाधान हो गया । अस्पृश्यता का वातावरण पूर्णत: समाप्त हो गया । जहाँ बड़े-बड़े भाषण अथवा उपदेशात्मक प्रवचन कुछ नहीं कर सकते, वहाँ हमारी महिला कार्यकर्ताओं ने दीपपूजा के माध्यम से कर दिखाया । ग्रामीण समाज अस्पृश्यता के अभिशाप से मुक्त हुआ ।

बिहार, झारखण्ड जैसे प्रान्तों में महिलाओं द्वारा शिवजी पर जलाभिषेक करना, असम के एन. सी. हिल्स में सत्संग केन्द्र चलाना, दिमासा समाज में भगवान शिव

के भजन गाने के लिए एकत्रित होना, जैसे श्रद्धाजागरण के कई प्रयास महिलाओं के माध्यम से चलते हैं। मातृहृदयी महिलाओं के माध्यम से कई प्रान्तों में बाल संस्कार केन्द्र चल रहे हैं। इन सभी प्रयासों के चलते समाज परिवर्तन में महिलाओं की बहुत बड़ी भूमिका है।

महिला सत्संग केंद्र

कर्नाटक राज्य का कारवार जिले का भटकल गाँव, जहाँ जाने के लिए न पक्का रास्ता था, न गाँव में बिजली, न ही पाठशाला। इस गाँव में अपना एक संस्कार केन्द्र चलता था। बाल संस्कार केन्द्र के माध्यम से महिला कार्यकर्ता का गाँव से अच्छा सम्पर्क था। इस गाँव में शराब पीने की आदत बहुत परिवारों में थी। घर का मुखिया शराब पीकर गड़बड़ करता था। घर में आर्थिक सहाय करना तो दूर रहा, शराब के लिये कई बार अपनी पत्नी-बच्चों को पीटता था। परिवार के दु:ख का यही कारण था। यह समस्या बच्चों ने अपनी शिक्षिका के सामने रखी।

दूसरे दिन शिक्षिका सारे बच्चों को लेकर शराब बनाने वाले के घर गयी। बच्चों ने कहा, 'आप शराब बनाना बंद करो', घरवाले कहने लगे, 'वह तो हमारी आय का साधन है। हम इसे कैसे बंद करें?' बच्चों ने कहा, 'आपके एक घर के कारण गाँव के कई घरों में अशांति रहती है। आप जब तक शराब बनाना बंद न करोगे, हम यहाँ से जाएंगे ही नहीं। हम आपके विरुद्ध शिकायत करेंगे'। बच्चों की इस माँग को उस परिवार ने मान लिया और परिवार मज़दूरी करने लगे। इस प्रकार कल्याण आश्रम का संस्कार केन्द्र गाँव के परिवर्तन का वाहक बना।

एक और उदाहरण है बस्तर के अबूजमाढ़ का। यह घने जंगल में बसा १०० गाँव का क्षेत्र है, वर्षों से जहाँ शिक्षा, पानी, रास्ते, बिजली आदि सुविधाओं का अभाव रहा है। राजकीय पाठशाला है, परन्तु बच्चों के न आने के कारण शिक्षक

का आना भी अनियमित था। उस गाँव में अपना बाल संस्कार केन्द्र शुरू हुआ। एक दिन शिक्षक जब विद्यालय में आए तो उन्होंने देखा कि एक महिला कार्यकर्ता बच्चों को विद्यालय आने के लिए कह रही है। यह देख उसको भी उत्साह आया और वह भी अपने काम में नियमित होकर कार्यरत हो गया। पाठशाला नियमित हो गई, यह सुनकर शिक्षाधिकारी भी खुश हुए। उन्हें जब यह जानकारी मिली कि यह कल्याण आश्रम के कारण हुआ, तब वे स्वयं संस्कार केन्द्र में आए और सबको धन्यवाद दिया।

विविध प्रकार के कार्यकलापों को कोई एक-दो महिलाएँ सम्हाल रही हैं, ऐसा नहीं। ग्राम स्तर से अ.भा. स्तर तक महिलाओं की समितियाँ बनी हैं। अपने कार्य में सबसे छोटी इकाई है - ग्राम। कई गाँवों में महिला समितियाँ हैं। वे विविध प्रकार के प्रकल्पों का संचालन एवं अपने वर्ष भर के कार्यक्रमों का आयोजन करती हैं। विकास के कई कार्यों की ओर ध्यान देती हैं। ग्राम संगठन खड़ा कर, वहाँ की समस्याओं का हल निकालती हैं। यह महिला संगठन का कार्य सुचारु रूप से चलता रहे, इस हेतु समय-समय पर प्रशिक्षण वर्गों का आयोजन होता है। युवती चेतना शिविर होते हैं। इन वर्गों में महिला स्वास्थ्य से लेकर कई समस्याओं के संदर्भ में चर्चा होती है, विचार-विमर्श होता है। पूर्णकालीन महिला कार्यकर्ताओं के लिए भी वर्गों का आयोजन होता है।

इस प्रकार जैसे-जैसे कार्य बढ़ता गया, अपने कार्यकर्ताओं के बीच महिला कार्य को अधिक गति देने हेतु अखिल भारतीय स्तर पर पुनः एक सम्मेलन आयोजित करने का विचार चल पड़ा। प्रथम महिला सम्मेलन सन् १९८५ में भिलाई में हुआ था। अब सम्मेलन कहाँ कर सकते हैं? बैठकों में चर्चा प्रारम्भ हुई। विविध स्थानों के सन्दर्भ में सुझाव आये। अंत में झारखण्ड के राँची स्थान पर दिसम्बर २००८ में महिला कार्यकर्ता सम्मेलन निश्चित हुआ। चारों ओर उत्साह का वातावरण बन गया। विविध प्रकार की तैयारियाँ शुरू हुई। इस सम्मेलन में ३४ प्रान्तों के १९८ जिलों से १८२० महिला कार्यकर्ता सम्मिलित हुईं। २२२ जनजातियों का प्रतिनिधित्व रहा।

विविध विषयों पर प्रस्ताव, आकर्षक प्रदर्शनी तथा झारखण्ड प्रान्त के गाँव-गाँव से आई १७५०० बहनों की भव्य शोभायात्रा का आयोजन हुआ। सार्वजनिक कार्यक्रम में २०००० से अधिक नगरवासी-वनवासी महिलाएँ उपस्थित रहीं। मानो जनसागर उमड़ पड़ा। अपने क्षेत्र में जिन्होंने विशेष कार्य किया है, समाज के विकास में अपना विशिष्ट योगदान दिया है, ऐसी ९ महिलाओं को इस भव्य समारोह में

सम्मानित किया गया। कल्याण आश्रम के कार्य में इस सम्मेलन के कारण उत्साह बढ़ा। कार्य पथ पर यह सम्मेलन एक मील का पत्थर बना।

नागरीय महिला कार्य

कल्याण आश्रम का ध्येय वनवासी समाज का विकास करना है। परन्तु यह विकास करने के लिए सम्पूर्ण समाज की शक्ति लगाना आवश्यक है। इस लिए नगरीय समाज में भी कार्य चलता है। नगरीय और वनवासी समाज के बीच की खाई को पाटना, वनवासी समाज के बारे में भ्रांतियाँ दूर करना, दोनों समाज में समरसता लाना - इन बातों को लेकर नगरीय कार्य प्रान्तों में चल रहा है। नगर की महिलाएँ अपनी घर गृहस्थी, नौकरी, व्यवसाय सम्हालकर तन-मन-धन से अपने वनवासी बान्धवों के लिए कार्य कर रही हैं। छुट्टी के दिन वनवासी क्षेत्र में जाकर वहाँ के प्रकल्पों को देखना, ग्राम की बहनों के साथ चर्चा करना, उनकी समस्याओं के बारे में हल निकालने का प्रयास करना, विभिन्न उत्सव हल्दी-कुँकू, राखी बंधन आदि के लिए ग्रामों में जाना, यह कार्य नगर की महिलाएँ करती हैं। नगरों में महिला टोली / समिति बनाकर भिन्न-भिन्न अवसरों पर नगरों की बहनों से आर्थिक या वस्तु रूप सहायता लेकर योग्य पद्धति से वनवासी क्षेत्र में पहुँचाने का कार्य नगरीय महिलाएँ करती हैं। साथ में नगर में चलने वाले जनजाति बहनों के छात्रावास में जाकर उनको संस्कारित करने का कार्य तथा उनकी पढ़ाई की कठिनाइयों को देखते शिक्षक की नियुक्ति कर पढ़ाई में वे आगे आये, यह प्रयास चलता है।

नगरी महिला कार्य के कारण ग्राम की बहनों में अपनत्व की भावना निर्माण हुई है। देश के सभी प्रान्तों के अधिकतम नगरों में महिला कार्य चलता है। नगर की महिलाएँ केवल खुद ही नहीं तो पूरे परिवार को इस कार्य में जोड़ती हैं। उनके बच्चे छुट्टियों में वनवासी क्षेत्र में जाकर वनवासी बच्चों को विभिन्न कलाएँ सिखाते हैं। उनके परिवार में रहकर जो भोजन पकाया गया है उसे सब मिलकर खाते हैं। वनवासी क्षेत्र के बच्चे नगर में लाकर उनको परिवार में रखकर अपने बच्चे जैसा व्यवहार उनके साथ में होने के कारण 'तू मैं एक रक्त' की अनुभूति सब करते हैं।

स्वयं सहायता समूह – परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त

जनजाति महिलाओं का सामाजिक, सांस्कृतिक विकास के साथ आर्थिक विकास हो इसलिए भी कई प्रकार के प्रयास हुए हैं। इसमें स्वयं सहायता समूह अथवा बचत गटों की मुख्य भूमिका रही है। १० रु. जैसी साधारण राशि जमा करने के बहाने ग्रामीण महिलाओं का एकजुट होना यह प्रारम्भ है और ग्राम विकास से लेकर परिवर्तन के कई प्रकल्पों तक उसे ले जाना यह उसका परिणाम है। नियमित

रूप से बचत करने के कारण ब्याज पर पैसे लाने से निर्माण होनेवाली घर की समस्या में प्रकाश की किरण देखने को मिली ।

केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र, झारखण्ड, बिहार, उड़ीसा जैसे कई राज्यों में अपने बचत गट आज कार्यरत हैं । १३९१ गाँवों में २२५२ बचत गट चल रहे हैं । इनमें ३० हजार से अधिक लाभान्वितों की संख्या है । इतना काम होने पर भी अभी भी, कार्य विस्तार की सम्भावनाएँ बहुत हैं । आज कल्याण आश्रम के कार्यविस्तार में बचत गटों की अपनी एक विशिष्ट भूमिका रही है । अपने विविध सफल उपक्रमों में से यह एक विशेष उपक्रम है । जैसे ही बचत गटों की सक्रियता बढ़ती है , हम ग्राम परिवर्तन का अनुभव कर सकते हैं । इसमें भी महिलाओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण है । इन बचत गटों के कारण महिलाएँ नियमित रूप से एकत्रित होने लगीं । न केवल पैसा जमा करना परन्तु साथ साथ कहीं कुटीर उद्योग तो कहीं कृषि विकास के प्रयोग जैसे उपक्रम शुरू हुए । कहीं सब्जी उगाना, तो कहीं मध्याह्न भोजन का ठेका लेने तक के विविध आर्थिक प्रयास होने लगे । परिवार की आय बढ़ी और गाँव का विकास होने लगा ।

बचत गट प्रशिक्षण वर्ग

बचत गटों के कारण आर्थिक विकास तो हुआ ही, साथ ही साथ सामूहिकता की भावना भी निर्माण होने लगी । गाँव के सारे काम मिलकर करने का मन बना । सामाजिक गलत परंपराओं को दूर करना, जाति प्रथा या छुआछूत के सन्दर्भ में सामाजिक परिवर्तन के प्रयास शुरू करना जैसे कई अच्छे उपक्रम होने लगे । सामाजिक समरसता का भाव जागरण होने लगा । इन सभी प्रयासों में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही, यह कहने में कल्याण आश्रम गौरव की अनुभूति करता है । ■

चलचिकित्सालय

अवसर मिलते खो–खो खेलों,
गिरकर उठना उठकर दौड़ो...

रोंगमई जनजाति के परम्परागत ईश्वरीय प्रतिक चिन्ह

जनसभा

'पर्यावरण दिन' निमित्त वृक्षयात्रा

महामहिम उपराष्ट्रपती द्वारा वनवासी महिला का राष्ट्रीय सम्मान

लोकनृत्य - मिजोरम

अखिल भारतीय कार्यकर्ता सम्मेलन - बंगलूर

खेलकूद

सन् १९५२ में स्थापित इस संगठन के विकास क्रम में स्थापना के सैंतीस वर्ष बाद एक नया आयाम जुड़ा – एकलव्य खेलकूद प्रकल्प ।

सन् १९८५, कल्याण आश्रम के अधिकारियों ने वनवासी क्षेत्रों में खेल प्रकल्प चलाने के विचार से सर्वप्रथम पुना (महाराष्ट्र) के एक खेल-शिक्षक श्री अशोक साठेजी को दायित्व सौंपा । श्री अशोकजी आज हमारे बीच नहीं रहे । लेकिन प्रारम्भिक दिनों में इस प्रकल्प के लिए उनका काफी श्रम रहा-प्रेरणा रही । उनके आव्हान पर भारत के कुछ प्रान्तों से १५-२० कार्यकर्ता इस खेलकूद प्रशिक्षण शिविर में भाग लेने के लिए मुंबई के कान्दीवली सूर्यवंशी शासकीय शारीरिक शिक्षण महाविद्यालय में शामिल हुए । ७ से ९ अगस्त १९८७, तीन दिन के शिविर में ही अपने खेल प्रकल्प की शुरुआत हुई । १९८८ के जनवरी में प्रथम वनवासी खेल महोत्सव की योजना बनी । उसकी तैयारी के लिए प्रान्त-प्रान्त में खेलकूद प्रतियोगिता आयोजित करने की योजना भी बनी ।

सन् १९८८ का प्रथम खेल महोत्सव मुंबई में हुआ । देश के १५ प्रान्तों से ३९२ वनवासी खिलाड़ी - भारत में प्रथम बार केवल वनवासियों के लिए संगठित खेल महोत्सव में आये ।

श्रीमान मिल्खा सिंहजी जिन्हे 'उड़न सिख ओलम्पियन' कहते हैं, इस कार्यक्रम में उपस्थित होकर खिलाड़ियों के मन को उत्साह और प्रेरणा से भर दिया। श्री मिल्खा सिंह ने कहा कि वनवासी खिलाड़ियों को देखकर उनको विश्वास हो गया है कि उन्होंने स्वयं दौड़ में जो रिकार्ड स्थापित किया है अब वह ध्वस्त हो जायेगा। सांसद व विपक्ष के नेता श्री अटल बिहारी वाजपेयी एवं महाराष्ट्र के कुछ मंत्री भी इस सम्मेलन में आये। भारतीय खेल प्राधिकरण के अधिकारी भी खेलकूद में उच्च शिक्षा देने के लिए खिलाड़ियों का चयन करने हेतु तीनों दिन उपस्थित रहे। काफी खिलाड़ियों का चयन किया। फिर योजना बनी गाँव-गाँव में 'एकलव्य खेलकूद केंद्र' प्रारम्भ करने की, बहुत ही कम समय में यह प्रकल्प देशभर के वनवासी क्षेत्रों में छा गया। हजारों खेल केन्द्रों में लाखों की संख्या में आनेवाले वनवासी खिलाड़ी - मानो पत्थर के नीचे दबी हुई धारा फूट निकली। इस प्रकार की अखिल भारतीय प्रतियोगिताओं का बड़ा कार्यक्रम हर चार वर्ष में एक बार आयोजित करने का निश्चय किया गया।

इन्दौर में दूसरा खेल महोत्सव संपन्न हुआ सन् १९९१ में। इसकी तैयारी करते-करते हमारे अखिल भारतीय खेल प्रमुख श्री अशोकजी साठे का आकस्मिक हृदयाघात से देहावसान हो गया। उन्हीं से प्रेरणा पाकर खेल महोत्सव जारी रखने का विचार हुआ। २२ प्रान्तों से लगभग ७५० वनवासी खिलाड़ियों ने इस महोत्सव में भाग लिया। इस खेल महोत्सव में खेल चिकित्सा और खेल पत्रिका पर संगोष्ठी आयोजित की गई एवं खेल पर आधारित प्रदर्शनी व अखिल भारतीय चित्र प्रतियोगिता भी आयोजित की गई। इस प्रकार एकलव्य खेल-प्रकल्पों द्वारा भारत के सभी वनवासी खिलाड़ी सभी प्रतियोगिताओं में भाग लेने लगे।

राजस्थान की उदयपुर महानगरी में अपने अखिल भारतीय खेलप्रमुख सेवानिवृत्त मेजर एस.एन. माथुर के नेतृत्व में सन् १९९५ में तृतीय राष्ट्रीय वनवासी क्रीडा महोत्सव सम्पन्न हुआ। कार्य की आवश्यकता समझकर वे हमारे खेल विभाग को नेतृत्व देने को तैयार हो गए। इस अभूतपूर्व महोत्सव ने वनवासियों के खेल इतिहास में एक नये अध्याय की रचना की। 'वनवासी ओलम्पिक' महोत्सव में भारत के २८ प्रान्तों से कुल ९९१ खिलाड़ी भैया-बहनों ने भाग लिया। घोष वाद्यों के साथ हजारों वनवासियों की शोभायात्रा एवं सांस्कृतिक टोलियाँ नृत्यगीत करती हुई स्टेडियम पहुँची, वायुसेना के सेनानियों ने पैराशूट डाइविंग के अनौखे करतब दिखाए। एक महान प्रेरणा लेकर खिलाड़ी अपने-अपने प्रान्तों में वापस पहुँचे।

फिर विचार आया कि चार वर्ष की अवधि बहुत लम्बी है, अत: प्रति वर्ष एक

विषय पर राष्ट्रीय स्तर पर प्रतियोगिता का आयोजन हो। इसको साकार करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर प्रारम्भ हुई वार्षिक क्रीडा प्रतियोगिता । १९९७ में राउरकेला (उड़ीसा) में मैराथन दौड़ से इसकी शुरुआत हुई। अपने इस प्रकल्प को लम्बी दूरी तय करना है, १९९८ में केरल के कन्यम पट्टा में तीरन्दाजी, १९९९ में अमरावती में तीरंदाजी और दौड़ की प्रतियोगिता सम्पन्न हुई ।

फिर सन् २००० में नवगठित राज्य झारखण्ड की राजधानी राँची महानगरी में चतुर्थ राष्ट्रीय वनवासी क्रीडा महोत्सव हुआ। उद्घाटन के दर्शन के लिए प्रांत के करीब ३४००० वनवासी अत्यन्त उत्सुक थे। तीन स्थानों से शोभायात्रा निकलकर बिरसा मुण्डा स्टेडियम पहुँची। लग रहा था कि वनवासियों से नगर भर गया। नगर के लोग भी हजारों की संख्या में मैदान में आए । नगरवासी, वनवासी एक महासम्मेलन का दृश्य - एक महाकुम्भ की अनुभूति । इसमें कल्याण आश्रम के पदाधिकारी, राज्यों के मंत्री, भारतीय खेल प्राधिकरण एवं तीरंदाजी संघ के अधिकारी उपस्थित हुए।

राष्ट्रीय खेल महोत्सव

क्र.	वर्ष	स्थान	प्रतिभागी	
			प्रांत	खिलाडी
१	१९८८	मुम्बई	१५	३९२
२	१९९१	इंदौर	२२	७५०
३	१९९५	उदयपुर	२८	९९१
४	२०००	राँची	३१	१३१७
५	२००५	अमरावती	२९	१५२८

सन् २००२ में कोलकाता (पश्चिम बंगाल) में तीरंदाजी वार्षिक राष्ट्रीय प्रतियोगिता सम्पन्न हुई । २००३ में आन्ध्र प्रदेश के निजामाबाद में तीरंदाजी, २००४ में राजस्थान की जयपुर महानगरी में तीरंदाजी और मैराथन दौड़, २००५ में सोनभद्र (उत्तर प्रदेश) के बमनी गाँव में तीरन्दाजी और कबड्डी, २००६ में बिहार के पूर्णिया नगर में तीरंदाजी और मैराथन दौड़ प्रतियोगिताएं सम्पन्न हुईं।

सन् २००५ के दिसम्बर में महाराष्ट्र की अमरावती महानगरी में पंचम राष्ट्रीय क्रीड़ा महोत्सव सम्पन्न हुआ, जिसमें देश के २९ प्रान्त तथा नेपाल के १५२८ खिलाड़ियों ने भाग लिया। अम्बा माता, एकवीरा माता के पूजन के बाद सम्पन्न इस महोत्सव के उद्घाटन समारोह में आस-पास के करीब १२,००० वनवासी

बन्धुओं की उपस्थिति में एक तरफ सांस्कृतिक कार्यक्रम में जैसे मैदान झूम उठा वैसे ही अमरावती हनुमान व्यायाम प्रसारक मण्डल के प्रशिक्षित खिलाड़ियों का प्रदर्शन मल्लखम्भ और असियुद्ध देखकर स्तम्भित रह गये, इस खेल महोत्सव को सन्त लोगों ने जैसे आशीर्वाद प्रदान किया, खेल जगत के विशिष्ट खिलाड़ियों ने तथा महाराष्ट्र-मध्यप्रदेश शासन के मन्त्रियों ने दिल खोलकर सराहा, अमरावती नगरी की मातायें भी अपनी ममत्व भावना को रोक नहीं पाईं, घर-घर से भोजन लाकर करीब १००० माताओं ने अरण्यवासिनी भारत माँ के इन लाडलों को अपने हाथों से भोजन कराया।

पंचम राष्ट्रीय क्रीडा महोत्सव अमरावती

सन् २००९ में सोलन (हिमाचल प्रदेश) में तीरंदाजी एवं खो-खो की अ. भा. खेल प्रतियोगिता हुई। इसमें देश भर से ३८४ खिलाड़ी सहभागी हुए। सन् २०१० में विजयावाड़ा (आंध्रप्रदेश) में तीरंदाजी की अ.भा. प्रतियोगिता सम्पन्न हुई, जिसमें देश के २१ प्रान्त तथा नेपाल मिलकर २२२ खिलाड़ी सहभागी हुए।

अभी तक सभी राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित स्पर्धाओं के परिणाम स्वरूप वनवासी ग्रामीण बालक-बालिकाएँ अन्तर्राष्ट्रीय खेलों में रुचि लेने लगे। स्वयं को प्रशिक्षित करने के लिए आतुर बने। वनवासी गावों में हमारे खेल केन्द्र चलते हैं। खेल समाप्ति के बाद राष्ट्र भक्ति के गीत गाते, वन्देमातरम् का गायन करते, भारत माता की जयकार के साथ भूमि वन्दना करते हुए बौद्धिक, ग्रामविकास, समाजसेवा, संस्कृति रक्षा आदि विषयों पर कार्यक्रम भी होते रहते हैं।

वनवासी कल्याण आश्रम के इस खेल प्रकल्प के कारण गाँव-गाँव में अद्भुत जागरण हुआ है। गाँव के विकास में वनवासी युवक-युवती आगे आए, अपनी

धर्म-संस्कृति रक्षा के लिए कटिबद्ध हुए हैं । खेल के कारण समाज के सभी वर्गों के लोगों से सम्पर्क स्थापित होने से सदियों से चला आ रहा सामाजिक कुंठा- बोध अति शीघ्र समाप्त हो रहा है। सैकड़ों खिलाड़ी आश्रम के कार्य में जुटे हैं। कल्याण आश्रम के किसी भी कार्यक्रम की व्यवस्था सम्हालने में वनवासी खिलाड़ी भैया-बहन आगे रहते हैं। खेलकूद के अपने कार्यक्रमों में समाज के सभी वर्गों के लोग सहयोग दे रहे हैं ।

हमारी प्रतियोगिताओं में से अच्छे खिलाडियों का चयन करते हुए उन्हें प्रशिक्षण देने की व्यवस्था हम करते हैं । ग्राम झालीकुआ, जि. डूंगरपुर (राजस्थान) के तीरंदाज श्री नरेश डामोर एक दिन अपने उदयपुर कार्यालय पर आये और अपनी राष्ट्रीय स्तर पर खेलने की इच्छा प्रगट की। परन्तु समस्या थी अच्छे गुणवत्ता के तीर-धनुष्य की। कल्याण आश्रम राजस्थान इकाई ने उन्हें १.५ लाख का तीर धनुष भेंट किया। उस वनवासी युवक का मुखमंडल चमक उठा। परिश्रम करने की इच्छा तो थी ही अब मार्ग प्रशस्त हुआ। आगे चलकर इसी युवक ने राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कई पदक प्राप्त किये। सन् २००७ में आयोजित एशियाड खेल प्रतियोगिता में उसने स्वर्ण पदक प्राप्त किया। भारत की ओर से टर्की, थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, सिंगापुर, स्पेन जैसे कई देशों में प्रतिनिधित्व किया और विजयी हुए। भारतीय खेल प्राधिकरण के अधिकारी अपने सम्पर्क में हैं और भारतीय तीरन्दाजी संघ से कल्याण आश्रम ने सम्बद्धता प्राप्त की है । समाज के कई बुद्धिजीवी, व्यवसायी, नौकरी करनेवाले, सामान्य जन सभी के सहयोग से अपना खेलकूद आयाम निरंतर प्रगति पथ पर है।

■

श्रद्धाजागरण

कल्याण आश्रम के प्रारम्भ से ही श्रद्धाजागरण का कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रथम अपने छात्रावास के बालकों के मन में अपने भगवान के प्रति श्रद्धा-आस्था-विश्वास दृढ़ करने के लिए, संस्कार सिंचन के आशय से छात्रावास में भजन-कीर्तन-आरती-रामायण पाठ जैसे कार्यक्रमों का आयोजन हुआ। पश्चात आसपास के गाँवों में भजन-सत्संग प्रारम्भ हुये।

वनवासी समाज अपने सम्पूर्ण हिन्दू समाज का अभिन्न अंग है। धर्म के प्रति सभी में अटूट श्रद्धा है। अपने वनवासी बन्धुओं में ये श्रद्धा-आस्था कायम रहे, इसलिए ग्राम में रामायण मंडली, भजन मंडली की स्थापना की गई। अपने अपने भगवान के श्रद्धास्थानों का निर्माण किया गया। साधु-संत-महात्माओं की पदयात्राओं का आयोजन किया गया। इसी समय में स्वामी अमरानंदजी महाराज का जशपुर में आगमन हुआ। स्वामीजी का गाँव-गाँव में जाना शुरू हुआ। वनवासी बन्धु भजन-सत्संग के कार्यक्रम में आत्मीयता के साथ सहभागी होते गये।

भारतवर्ष में वनवासियों के बीच इसाईयों द्वारा योजनापूर्वक अनेक प्रकार के भ्रम फैलाएँ गये। जैसे कि 'वनवासियों का

कोई धर्म नहीं है । वनवासी मूलनिवासी हैं । वनवासी हिन्दू नहीं हैं । वनवासी प्रकृतिपूजक हैं, इत्यादि... इस प्रकार के भ्रम समाप्त होने चाहिए । वनवासी समाज इससे मुक्त होना चाहिए । इसलिये श्रद्धाजागरण का कार्य करना अत्यंत आवश्यक है ।

श्रद्धाजागरण केंद्र

श्रद्धाजागरण आयाम के द्वारा गाँव-गाँव में श्रद्धाजागरण केन्द्र-सत्संग केन्द्र-भजन मंडलियाँ प्रारम्भ हों , इस प्रकार के प्रयास सर्व दूर चल रहे हैं । इन केन्द्रों में महिला-पुरुष सब आते हैं । भारत के वनवासी क्षेत्रों में भगवान की पूजा के सन्दर्भ में बहुत विविधता है । सब लोग अपने-अपने क्षेत्र में मान्यता प्राप्त भगवान का स्मरण करते हैं । ढोलक-मंजीरा के ताल पर भक्तिभावपूर्वक भजन गाये जाते हैं । भजन के बाद सत्संग होता है । इसमें धर्म के बारे में जानकारियाँ दी जाती हैं । कहीं कहीं धार्मिक ग्रथों का पठन होता है । अपने धर्म-संस्कृति-परम्परा-रीतिरिवाज-उत्सव-त्यौहार के बारे में जानकारी प्राप्त होती है । सामूहिक रूप में पर्व उत्सव मनाये जाते हैं । कभी-कभी नगरजन इसमें सहभागी होते हैं । तो कभी किसी साधु-महात्माओं का मार्गदर्शन मिलता है । धर्म के प्रति जागरण होता है । वनवासी क्षेत्र में जो भी श्रद्धास्थान हैं, उनकी सुरक्षा करना । उत्सव-त्यौहार-मेले अच्छी तरह मनाना, प्रारम्भ हो जाता है ।

वर्षों पूर्व लोकमान्य तिलकजी ने महाराष्ट्र में समाज संगठन एवं देशभक्ति जागरण के आशय से गणेश उत्सव प्रारम्भ किया । कल्याण आश्रम के प्रयासों से आज वनवासी क्षेत्र में भी मनाया जाता है । ग्राम की समितियाँ स्वयं गणेश उत्सव का आयोजन करती है । राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश के वनवासी क्षेत्रों

में कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता गणेश मूर्तियों का वितरण करते हैं। गाँव-गाँव में गणेश उत्सव अच्छी तरह मनाया जाता है। अनंत चतुर्दशी के दिन आसपास के १०-१२ गाँव एकत्रित होकर गणेश विसर्जन के कार्यक्रम का आयोजन धूम-धाम से करते हैं। शोभायात्रा-धर्मसभा होती है। सारा वातावरण मानो धर्ममय हो जाता है। इसी प्रकार कावड यात्रा, पदयात्रा का आयोजन भी कई प्रान्तों में होता है। साधु-संतों का प्रवास और इस निमित्त होने वाले सत्संग भी धर्म जागृति के माध्यम हैं। दीप पूजा, पुजारियों का अथवा पहानों का सम्मेलन, करमापूजा, सरहुल पूजा आदि विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन भी होता है।

वनवासी समाज की संस्कृति, परम्परा, रीतिरिवाजों की रक्षा करना एक महत्वपूर्ण कार्य है। वनवासी समाज के लोकनृत्य की परम्परा जीवन का एक अभिन्न अंग है। देश के विविध क्षेत्रों में विविध नृत्य परम्परा विकसित हुई है। इन लोकनृत्यों की सुरक्षा एवं संवर्धन भी, श्रद्धाजागरण विभाग का कार्य है। इसलिए लोकनृत्यों का सामूहिक कार्यक्रम अथवा प्रतियोगिता का आयोजन होता है।

जहाँ कहीं धर्म के प्रति आस्था कम होते दिखाई देती है, वहाँ मतान्तरण बढ़ते दिखाई देता है। अराष्ट्रीय गतिविधियाँ बढ़ते दिखाई देगी। ऐसे क्षेत्र से सम्पर्क रखना आवश्यक है। रक्षासूत्र अथवा उस क्षेत्र में मान्यता प्राप्त देवी-देवताओं के चित्र-लाकेट लेकर सम्पर्क करना आसान होता है। ऐसे सम्पर्क करने से श्रद्धाभाव का जागरण होता है, देशभक्ति का जागरण होता है।

वनवासी क्षेत्र में जो भी पूजा पद्धति है, उसको मान्यता देना। उनके साथ सहभागी होना। ऐसे क्षेत्र में छोटे-बड़े सम्मेलनों का आयोजन करना। यह वर्ष भर चलनेवाले कार्यक्रमों का एक अंग ही है। जब कभी सम्मेलनों का आयोजन करते हैं, तो उसके पूर्व उस क्षेत्र में सम्पर्क का कार्यक्रम करने से, घर-घर ध्वजा लगाने से अच्छा वायुमण्डल बनता है। ऐसे सम्मेलनों में संत-महात्माओं का उपस्थित होना तथा उनका सत्संग-प्रवचन होना आवश्यक है। ऐसे प्रयासों के कारण अच्छी सफलता मिलती है। परिणामतः मतान्तरण पर रोक लगती है। समाज स्वयं जागृत होकर मतान्तरण का विरोध करता है। संतों के मार्गदर्शन में अण्डमान, डांग (गुजरात), महाराष्ट्र, झाबुआ (म. प्र.) क्षेत्र में अच्छे परिणाम प्राप्त हुये।

अपने कार्यकर्ता एवं स्थानीय समाज के सहयोग से उड़ीसा, बिहार, झारखण्ड, आन्ध्र प्रदेश तथा पूर्वांचल में श्रद्धाजागरण के कार्य को अच्छी गति प्राप्त हुई। ■

हितरक्षा

'हितरक्षा' कहते ही अर्थ स्वयं स्पष्ट हो जाता है। वर्षों से जिन पर अन्याय हो रहा है, जिनका शोषण हो रहा है, ऐसे अपने वनवासी बन्धुओं के हितों की रक्षा। वैसे कल्याण आश्रम की स्थापना से लेकर आज तक हमने ऐसे कई उपक्रम किये, ऐसे कई कार्यक्रम आयोजित किये, जिसके पीछे वनवासी समाज के हितों की रक्षा का ही उद्देश्य रहा। पूज्य बालासाहब देशपांडेजी ने स्वयं भी कोर्ट–कचहरी से लेकर विभिन्न प्रकारों से वनवासी बन्धुओं को हितरक्षा के रूप में कई बार सहायता की है।

सन् १९९० से कल्याण आश्रम में 'हितरक्षा' विभाग कार्यरत हुआ। हम सब भलीभाँति जानते है कि व्यापारियों से लेकर ठेकेदारों तक और कहीं कहीं सरकारी अधिकारियों द्वारा वनवासी समाज का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में शोषण होता है। राजनीति से जुड़े नेतागण भी इसमें पीछे नहीं है। ऐसे में अन्याय दूर करने अथवा शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाने की आवश्यकता रहती है। अपने हितरक्षा विभाग द्वारा वनवासी समाज के पक्ष में समय–समय पर सरकारी कार्यालयों में ज्ञापन देना, सभा–सम्मेलनों के माध्यम से दबाव डालना जैसे कई प्रयास चलते रहते हैं। कई स्थानों पर रैलियों का आयोजन कर समाज में अन्याय के सामने शक्ति

खड़ी करना भी आवश्यक होता है । समाजहित में नेतृत्व पनपता है, जो अपने अधिकारों की रक्षा हेतु सक्रिय होते हुए भी सामाजिक सद्भावना को हानि न पहुँचे, ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन करता है । आइये ! कुछ उदाहरण देखें, जिसके आधार पर हितरक्षा विभाग की कार्यशैली एवं सक्रियता का हम अंदाजा लगा सके ।

सीताफल का सही मूल्य मिलना ही चाहिए

राजस्थान के वनवासी क्षेत्र में देवला (तहसील–कोटड़ा, जिला– उदयपुर), बिछिवाडा (तहसील–झाडोल, जिला–उदयपुर), कुभलगढ़, (जिला– राजसमन्द) क्षेत्रों में वन उपज के रूप में सीताफल बहुत होते हैं । वनवासी बन्धु इस फल को तोड़कर उसका उपयोग स्वयं के लिये करते हैं और बड़ी मेहनत से दूर-दूर से सिर पर ढोकर लाते हैं । इस फल का विपणन होता है परंतु इसका लाभ पर्याप्त रूप में उन्हें नहीं मिलता है । इसका लाभ उठाने के लिए नगर से कई एजेन्ट व ठेकेदार फसल के समय आ जाते है तथा बहुत ही कम मूल्य में इनसे क्रय करके लाभ कमाते है । इसके कारण वनवासी बन्धुओं का शोषण होता है । अच्छे सीताफल भी ये एजेन्ट / ठेकेदार केवल दो–तीन रुपये किलो तक खरीद लेते हैं व ट्रकों से बाहर भेज कर वनवासी बन्धुओं का शोषण करते हैं ।

राजस्थान वनवासी कल्याण परिषद की कोटडा तहसील इकाई ने यह सब देख कर एक वन उपज क्रय–विक्रय सहकारी समिति का गठन १६ जून २००९ को किया और इस हेतु एक सौ दस सदस्य बनाये गये । प्रत्येक सदस्य से ११०/– रु. सदस्यता शुल्क लिया गया । इस समिति का पंजियन सहकारी संस्था के रूप में किया गया । गठित सहकारी समिति के पास साधन नहीं थे परन्तु कार्यकर्ताओं के सामने वनवासी बन्धुओं के शोषण समाप्त करने का लक्ष्य था । साधन जुटाना प्रारम्भ हुआ । कुछ बन्धुओं के सहयोग से एक कॅरेट में २० किलो सीताफल रह सके ऐसे १६०० कॅरेट एकत्रित किये गये । श्री अशोकजी भन्साली – मुंबई ने इस सम्बन्ध में परिषद को कार्यशील पूंजी उपलब्ध करवाई । समिति के अध्यक्ष श्री रत्नाराम गरासीया को बनाया गया व परिषद के हितरक्षा प्रकोष्ठ प्रभारी श्री मोहनलालजी जैन व दिनेश जी बम्ब ने इसमें सक्रिय सहयोग किया । कई बार बैठकें आयोजित कर कार्य को मूर्त रूप दिया गया ।

सहकारी समिति के अन्तर्गत क्षेत्र में ९ पंचायतों के ७२ गाँव के १५ केन्द्र बनाये गये और ५७ टन सीताफल वनवासियों से क्रय किये गये । एकत्रित सीताफल का ट्रकों के माध्यम से परिवहन कर गुजरात में विक्री हेतु भेजे गये । जो सीताफल वनवासी बन्धु २ अथवा ३ रु. प्रति किलो में बेचता था उसी सीताफल को सहकारी समिति के द्वारा १० रु. प्रति किलो के दर से खरीद कर वनवासी बन्धुओं को

आर्थिक लाभ दिलाया गया। इस प्रकार सबको सीताफल के मूल्य के माध्यम से सीधा-सीधा चार से पाँच गुना लाभ मिला और शोषण बन्द हुआ।

धीरे-धीरे परिस्थिति बदली। व्यापारियों ने भी सहकारी समिति की तरह अपने मूल्य में वृद्धि की। वनवासी बन्धु सहकारी समिति के कार्यकर्ताओं को पूछने आये कि जब व्यापारी हमें अधिक मूल्य देते हैं, तो हम सीताफल किसको दे? कार्यकर्ताओं ने कहा कि वह आप स्वयं तय करें आपको यदि व्यापारी से सही मूल्य मिलता है तो आप सीताफल उन्हें भी दे सकते हैं, परन्तु इतना होते हुए भी कई वनवासियों ने सीताफल सहकारी समिति को ही दिये। वनवासी बन्धुओं का अपने पर विश्वास ही अपनी सबसे बड़ी सफलता है। पहले वर्ष के अनुभव के आधार पर वनवासी बन्धुओं को अधिक लाभ कैसे हो ? इस हेतु समिति प्रयास करेगी।

डी.एल.सी. दर को बढ़ावा कर लाभ दिलाया

सिरोही जिले के पिंडवाड़ा क्षेत्र में राष्ट्रीय राजमार्ग–७६ पर मार्ग को फोरलेन का निर्माण कार्य चल रहा है। इस हेतु वनवासी बन्धुओं की भूमि अधिग्रहण की गयी। लेकिन अधिकारियों द्वारा इस सड़क निर्माण हेतु अधिग्रहण भूमि का मुआवजा २५-३० वर्षों पुरानी डी.एल.सी. दर पर ही उनको मुआवजा भुगतान निश्चित किया गया। जिसके कारण अवास भूमि के स्वामी वनवासी बन्धुओं को बहुत ही कम राशि मुआवजे के रूप में मिल रही थी। परिषद के सिरोही जिले के कार्यकर्ताओं ने इसके सम्बन्ध में पहल कर सम्बन्धित विभाग के अधिकारियों से सम्पर्क किया व पुरानी डी.एल.सी. दर के बजाए नई डी.एल.सी. दर (वर्तमान बाज़ार मूल्य) पर निर्धारित करायी गई। इस प्रकार वनवासी बन्धुओं को शासन के द्वारा पहले से पाँच से छह गुना अधिक मुआवजा दिलवाया गया। इसके कारण उस क्षेत्र में परिषद के कार्यकर्ताओं की प्रतिष्ठा तो बढ़ी और इससे भी अधिक याने अपने वनवासी बन्धुओं को भूमि का बाज़ार मूल्य अर्थात उचित मूल्य भी मिला। यदि परिषद के कार्यकर्ता पहल नहीं करते तो अपने वनवासी बन्धुओं को इस सम्बन्ध में अधिक आर्थिक हानि होती यह निश्चित दिख रहा था।

वनभूमि के पट्टे प्राप्त करना वनवासियों का अधिकार है

राजस्थान के वनक्षेत्र में वनाधिकार कानून के अन्तर्गत वनवासी बन्धुओं को अधिपत्यवाली भूमि के पट्टे उनके पास नहीं थे। शासन द्वारा इस सम्बन्ध में पट्टे देने का निर्णय किया गया। शासन ने समाचार माध्यमों से प्रचार-प्रसार किया कि वनवासियों के आधिपत्यवाली भूमि के पट्टे दे दिये गये हैं। परन्तु परिस्थिति अलग ही थी। परिषद के हितरक्षा आयाम के प्रभारी श्री भगीरथ प्रसाद जोशी स्वयं क्षेत्र में गये तो उन्हें जानकारी मिली कि पटवारी, फोरेस्टर तथा दलालों द्वारा पट्टे देने व सीमांकन करने के सौदेबाजी की जा रही है। पट्टे वास्तव में जारी नहीं हो रहे हैं।

प्रतापगढ़ जिले का अनुभव इस परिस्थिति की जुबानी देने समान कह सकते हैं। अपने कार्यकर्ताओं ने प्रतापगढ़ जिले के नकोर क्षेत्र में सम्पर्क किया तो जानकारी मिली – कर्मचारी वर्ग तथा भूमि के दलाल द्वारा सौदेबाजी कर प्रति भूमि के पट्टे पर दो हजार की राशि ठहराई गई है तथा वह लेकर ही भूमि के पट्टे को दिया जाना तय किया गया है। परिषद के कार्यकर्ताओं द्वारा इस विषय में अधिकारी से सम्पर्क किया गया तथा इस सौदेबाजी की जानकारी दी गई। इस क्षेत्र में परिषद के कार्यकर्ता द्वारा यह सौदेबाजी समाप्त कर वन बंधुओं को ४५ वनभूमि के पट्टे नि:शुल्क दिलाये गये तथा जो राशि कर्मचारी द्वारा अनियमित रूप से प्रति पट्टा दो हज़ार रुपये ले लिये थे वह भी जनजाति बन्धुओं को पुन: लौटवाये गये।

इसी प्रकार डुंगरपुर जिले के सागवाड़ा क्षेत्र में भी आठ वनभूमि के पट्टे जो सौदेबाजी के अन्तर्गत रोक रखे थे उनको भी दिलाने हेतु परिषद के कार्यकर्ताओं ने उच्चाधिकाारियों से सम्पर्क कर जनजाति बन्धुओं को रोके गये ८ वनभूमि के पट्टे नि:शुल्क दिलाये।

जनजाति समाज को संवैधानिक अधिकारों के प्रति सज़ग करना इस हेतु अपने कार्यकर्ता विविध कार्यक्रमों का आयोजन करते है। इन कार्यक्रमों में वन अधिकार, संवैधानिक अधिकार, कानूनी जानकारियाँ, शिक्षा का अधिकार इत्यादि की जानकारी दि जाती है। विभिन्न स्थानों पर एसे कार्यक्रमों में ४३,६०० जनजाति बन्धु एकत्रित हुये। अपने समाज के युवा वर्ग को इस हेतु आगे ले जाना चाहिए, ऐसे जाति-जमाति के बुर्जुगों ने मिलकर निर्णय किया।

महाकौशल प्रांत की बैगा जनजाति के बन्धु अत्यन्त निर्धन एवं अशिक्षित है। वनवासी कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता इनके बीच भी कार्य करते है। अपने संवैधानिक अधिकार क्या है ?, यह जानकारी देते हुए बैगा समाज को जागृत किया गया। उन्हें सरकार की ओर से खाद्य सुविधा, शिक्षा एवं स्वास्थ्य के सन्दर्भ में प्राप्त होनेवाली सुविधा कौनसी है, इसकी जानकारी दि गई। इस हेतु आयोजित कार्यक्रम में ३५० पुरुष सहभागी हुये थे।

मध्यभारत के सहारीया भी पिछडी जनजातियों में से एक है। उनके पिछड़ेपन का गैरलाभ उठाते हुये ताकतवार लोग उनका बंधुआ मज़दूर के नाते उपयोग करते है। अपने कार्यकर्ताओं ने संपर्क प्रारम्भ किया। सभी को एकत्रित कर एक कार्यक्रम का आयोजन किया। जिसमें ३५० पुरुष तथा २५६ महिला सहभागी हुई। सभी में एक विशेष उत्साह दिख रहा था। बंधुआ मजदूरी समाप्त करने के सन्दर्भ में कदम बढ़ाना चाहिए ऐसी चर्चा चली। परिणामस्वरूप सहरीया जनजाति के ये सारे अपने भाई, बंधुआ मज़दूरी से काफी कुछ मात्रा में मुक्ति पा सके। ऐसे पिछड़ी जाति के वनवासी समाज में दिख रही जागृति के आधार पर हम निश्चित

रूप में कह सकते है की अपने कार्यकर्ताओं के प्रयास सफल हो रहे है।

उत्तर-पूर्व क्षेत्र का त्रिपुरा प्रांत, विविध समस्याओं से घिरा हुआ है। वहाँ भील, भूटिया, कुकी, सॉईमल, चकमा, गारो, हालाम, जमातिया, खासी जैसी विविध जनजातियाँ निवास करती है। अपने इन बन्धुओं के बीच भी कल्याण आश्रम का कार्य कई समय से चल रहा है। जनजाति बन्धुओं के वर्षों से चले आ रहे अपने-अपने परम्परागत रीतिरिवाज (कस्टमरी लॉ) होते है। जनजाति कार्यकर्ताओं ने अपने-अपने जनजातियों के रीतिरिवाजों को लेखबद्ध किया। उन जनजाति के सभी प्रमुख व्यक्तियों से मिलकर उसके सन्दर्भ में चर्चा की। इस लेखन से सभी को सहमत कर एक बड़े भारी कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसमें हजारों वनवासी बन्धु एकत्रित हुये। इस निमित्त पश्चिम त्रिपुरा जिले के खुमलुंग गाँव में एक बड़ा भारी जुलूस निकला।

सभी ने मिलकर उत्तर पूर्वांचल धर्म संस्कृति सुरक्षा मंच के अध्यक्ष श्री विक्रम

जनजाति हितरक्षा हेतु जन आंदोलन

बहादूर जमातियाजी की अध्यक्षता में विविध जनजातियों के अपने रीतिरिवाजों का एक विस्तृत अभिलेखन (Documentation) त्रिपुरा ट्राइबल एरिया ऑटोनोमस डीस्ट्रीक्ट कॉन्सिल के चीफ एक्झीकिटीव्ह मेम्बर श्री रंजीत देववर्मा को सार्वजनिक रूप में दिया। इस कार्यक्रम के माध्यम से वनवासी बन्धुओं में स्वाभिमान के दर्शन हुए। जनवरी २०१० में आयोजित इस कार्यक्रम को देख कोई भी व्यक्ति कह सकता है, ‘विराट अब जाग रहा है’।

वर्षों पूर्व ऐसा ही कुछ महाराष्ट्र में भी देखने को मिला । प्रत्येक वनवासी बन्धु जब जाति प्रमाणपत्र में अपने जाति का उल्लेख करता है, तब उसे जाति के पूर्व 'हिन्दू' शब्द लिखने की आवश्यकता नहीं है, केवल जाति का ही उल्लेख करें, उतना पर्याप्त है-ऐसा एक अध्यादेश सरकार ने निकाला। वनवासी बन्धुओं में इसके सन्दर्भ में बहुत चर्चा चली। जिस हिन्दू परम्परा का हम वर्षों से पालन करते है, जिस हिन्दू जीवन पद्धति के आधार पर हम जीवनयापन करते है, उसे क्यों न लिखें ? ये हमारे स्वाभिमान का विषय है, गौरव का विषय है । सरकार कैसे तय कर सकती है की हमने जाति के पहले 'हिन्दू' लिखना की नहीं लिखना ? ये तो जाति के प्रमुख बैठकर तय करेंगे। गाँव-गाँव में चली इस चर्चा ने राज्य में आंदोलन का स्वरूप धारण किया। इस आंदोलन का नेतृत्व कर रहे थे, अपने वनवासी कल्याण आश्रम के तत्कालिन अध्यक्ष आदरणीय श्री आवारी गुरूजी। जनजाति समाज के नेतृत्व ने उप-मुख्यमंत्री से मिलकर अपना पक्ष रखा। धुलिया, नंदुरबार, नाशिक जैसे जिलों के समाहर्ताओं (कलेक्टर) को ज्ञापन दिया गया। मुंबई में इस सन्दर्भ में पत्रकार वार्ता हुई। राज्य के पत्रकार बन्धुओं ने अच्छा सहयोग दिया, परिणामस्वरूप प्रमुख सभी समाचार पत्रों में समाचार छपे। आंदोलन सम्पूर्ण सामाजिक नेतृत्व द्वारा संचालित था। अपनी ओर से तथ्यात्मक जानकारी देते हुये श्री आवारी गुरूजी ने कहा की कोई भी राज्य सरकार संसद की मंजुरी लिये बीना ऐसा अध्यादेश निकाल ही नहीं सकती। तत्कालीन आदिवासी मंत्री श्री मधुकरराव पिचड को मिलना हुआ तो उन्होंने आश्वासन देते हुये कहा की हम इसके सन्दर्भ में जल्द ही निर्णय करेंगे। ज्ञापन, पत्रकार वार्ता जैसे विविध कार्यक्रमों के चलते सरकार पर दबाव बढ़ता गया। अंत में सरकार को झुकना पड़ा । सरकार ने वह अध्यादेश वापस लिया। सत्य की विजय हुई।

राजस्थान, मध्यप्रदेश, त्रिपुरा, महाराष्ट्र जैसा ही हितरक्षा आयाम के अन्तर्गत देश के विभिन्न राज्यों में भी कार्य प्रगति पथ पर है ।

■

नगरीय कार्य

वनक्षेत्र में आज शिक्षा, चिकित्सा सुविधा, आर्थिक विकास की दिशा में हमें कमियाँ दिखाई पड रही है। अगर नगरों में रहनेवाला समाज १०० वर्ष पूर्व ही जागृत एवं सचेत होकर वनक्षेत्र के बारे में सक्रिय हुआ होता तो वनाँचल की स्थिति कुछ और ही होती। नगरीय समाज की उदासीनता, उपेक्षा एवं वनक्षेत्र तथा जनजाति समाज के बारे में अज्ञानता के कारण आज अराष्ट्रीय, असामाजिक एवं विघटनकारी शक्तियाँ वनक्षेत्र में अपनी जड़े जमायें हुए है। भोला-भाला वनवासी समाज उनकी शिकार बन गया है।

सामान्य रूप से एसी धारणा है कि नगरवासियों से इस कार्य के लिये धन तथा संसाधन की पूर्तता यही नगरीय कार्य है। यद्यपि 'नगरीय कार्य' का यह एक कार्य अवश्य है, परन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है नगरवासियों के ध्यान में यह लाना की वनवासी समाज इसी राष्ट्रपुरूष का एक अंग है। वनवासी बन्धुओं ने आज भी अपनी संस्कृति के जीवनमूल्यों को सम्भाल के रखा है।

वनवासी समाज आर्थिक रूप में अभावग्रस्त हो सकता है, किन्तु सांस्कृतिक जीवनमूल्यों की दृष्टी से सम्पन्न है। अत:

नगरीय एवं वनवासी समाज के बीच आत्मीय सम्पर्क, सम्बन्ध स्थापित होने से जहाँ एक ओर अपने वनबन्धुओं की भौतिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा वहीं दूसरी ओर नगरीय परिवारों में सांस्कृतिक जीवनमूल्यों की सम्भावनाएँ बढ सकती है। अत: यह आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने में कल्याण आश्रम सेतु का कार्य कर रहा है।

वनवासी समाज भी इस राष्ट्र की विकास धारा में अपना योगदान दे सकता है। इस राष्ट्र को विकसीत एवं सशक्त बनाना है तो देश के दस करोड़ वनवासी बाँधवों को भी उपर उठाना होगा, विकसीत करना होगा। यह कार्य नगरवासी कर सकते है। उसके लिये आवश्यक है नगरवासियों के मन में भाव जगाना। इस हेतु नगरवासियों से व्यापक सम्पर्क कर के ....

१) वनवासी क्षेत्र हेतु हो रहे इस कार्य के लिये कर्तव्यभाव जगना।

२) वनवासी समाज ने इस राष्ट्र के हित में तथा धर्म-संस्कृति की रक्षा के लिये कितना समर्पण एवं बलिदान किया है उसकी जानकारी देना।

३) वनवासी समाज के गुणसम्पदा की सही पहचान नगरों में कराना।

४) वनक्षेत्र की समस्याओं एवं चुनौतियों के प्रति नगरीय समाज को जागृत कराना।

५) इस हेतु चल रहे अपने कार्यों से, कार्यपद्धति से परिचित करते हुए नगरवासियों को कार्य से जोड़ना एवं सक्रिय करना।

सांस्कृतिक कार्यक्रम में उपस्थित श्रोतागण

६) नगरीय कौशल्य का वनक्षेत्र हेतु उपयोग करना तथा आवश्यक संगठनात्मक ढ़ाँचा खड़ा करना ।

७) कल्याण आश्रम के कार्य के लिये नगरों से आवश्यक धन-साधन संग्रह करना ।

वर्तमान में इस प्रकार का उद्देश्य लेकर नगरीय कार्यकर्ता कार्यरत है । नगर समिति, नगर महिला समिति, चिकित्सा समिति, निधि समिति.... जैसी समितियाँ बनाकर योग्य व्यक्तियों को चयन कर के कार्य के साथ जोड़ा है ।

नगरीय कार्य की उद्देश्यों की सफलता हेतु कार्ययोजना के अंतर्गत विविध कार्यक्रमों की रचना एवं विविध कार्यों के द्वारा शहरी समाज को नई दृष्टी प्राप्त हो रही है । वनवासी कल्याण का यह कार्य राष्ट्रीय कर्तव्य के निर्वाह के रूप में करने हेतु नगरीय लोग तन-मन-धन से सहयोगी हो रहे है ।

नगरीय कार्य का प्रारम्भ एवं विकास :

वैसे तो कल्याण आश्रम के प्रारम्भकाल से ही नगरीय कार्य प्रारम्भ हो गया था । क्रमशः नगरीय कार्य का स्वरूप विकसित होते गया । विशेष कर १९८३ में दो सौ से अधिक कार्यकर्ता (नगरों से) प्रयास कर राँची, कोलकाता, सबंलपुर, रायगढ़, अंबिकापुर, विलासपुर आदि नगरों से वनाँचल में उपस्थित हुए और वनवासी समाज को निकट से समझने का अवसर प्राप्त किया । क्रमशः विकसीत होते इस कार्य को वर्ष २००१ में आयाम के स्वरूप प्राप्त हुआ ।

इस कार्य को चलाने हेतु नगर समिति, नगर महिला समिमियों की रचना कि गई । आज की स्थिति में देश भर में २९५ नगर समिति एवं ११९ नगर महिला समितियों गठन हुआ है । इसके आलावा कार्य को बल देने हेतु चिकित्सा समिति, सेवापात्र समिति, निधि समिति... इत्यादि का भी कहीं-कहीं गठन होता है ।

नगरीय क्षेत्र में कल्याण आश्रम के कार्य निम्न प्रकार से संचालित किये जाते है ।

१) वैचारिक जागरण एवं भावजागरण

२) वनक्षेत्र का दर्शन एवं भ्रमण

३) वनक्षेत्र में सेवाकार्य

४) वनवासी समाज हित के कार्यों में नगरों में सहयोग

५) सामाजिक समरसता का निर्माण

६) आर्थिक विकास के कार्य में सहभागीता

७) धन संग्रह एवं साधन संग्रह

वैचारिक जागरण व भावजागरण

नगरीय समाज का सम्पर्क करते हुए विभिन्न माध्यम से उनका वैचारिक एवं भावनात्मक जागरण हो तथा वनक्षेत्र, वनवासी समाज की सही स्थिति से शेष समाज अवगत हो यह महत्वपूर्ण कार्य है। इस हेतु.....

(क) व्यक्तिगत सम्पर्क (ख) मासिक विचार गोष्टियाँ, वार्तालाप का आयोजन (ग) विविध कार्यक्रमों के माध्यम से जनसम्पर्क जैसे - वार्षिकउत्सव, छात्र नगर यात्रा, परिवार मिलन, सम्पर्क अभियान, श्रेणी बैठक (घ) वनवासी समाज जीवन तथा अपने द्वारा संचालित सेवाकार्यों पर आधारित वीडीयो कॅसेटस् शो का छोटे छोटे समुह में आयोजन (च) चित्र प्रदर्शनी (छ) पत्रकार वार्ता (ज) कल्याण आश्रम की पत्रिका का वितरण (ज्ञ) पाक्षिक/मासीक पत्रिका का प्रकाशन (ट) विद्यालय, महाविद्यालय नगरों में भाषण के कार्यक्रम

२) वनक्षेत्र का दर्शन एवं भ्रमण

सम्पर्कित परिवारों को, मित्रों का वनक्षेत्र में चल रहे सेवा प्रकल्पों का दर्शन तथा वनवासी समाज जीवन का प्रत्यक्ष दर्शन कराना आवश्यक है। वनवासी समाज का सुसंस्कृत जीवन, आतिथ्यभाव, भारतीय संस्कृतिक के उच्च आदर्शों का उनके जीवन में होनेवाला दर्शन, उनकी सरलता आदि का प्रभाव भला कैसे नहीं होगा? साथ में उनके कर्तव्य भाव से सक्रिय होता है। वनक्षेत्र की समस्याएँ तथा दिख रही अंतर्राष्ट्रीय एवं समाज विघातक प्रवृत्तियों की भी जानकारी मिलने से नगरवासियों में कार्य की आवश्यकता भी महसुस होती है।

३) वनक्षेत्र में सेवाकार्य

इस कार्य की आवश्यकता का अनुभव करने से नगरवासियों में भावजागरण कर्तव्यबोध भला क्यों नहीं होगा ? नगरजनों के कौशल्य, बुद्धिधन का उपयोग करते हुए वनवासी अंचल में -

(अ) चिकित्सा सेवाकार्य - डाक्टर के द्वारा मेडिकल कॅम्पस् एवं आरोग्य सेवा की देखभाल (ब) पशु चिकित्सा हेतु मार्गदर्शन/डाक्टर्स की उपलब्धि (क) छात्रावास एवं विद्यालयों में शिक्षा कार्य हेतु मार्गदर्शन (ड) वनवासी गावों में स्वास्थ्य जागरण।

४) वनवासी समाज हित के कार्यों में नगरों में सहयोग

अपनी आवश्यकताओं के लिये वनवासी बन्धु विविध कार्यों हेतु नगरों में आते है। उनको सही जानकारी नहीं होने से वे कठिनाईयाँ महसुस करते है व गुमराह होते है। एसे समय में नगर क्षेत्र में उनका सहयोग किया जा सकता है। जैसे –

(अ) चिकित्सा हेतु आते जनजातिबंधुओं का सही मार्गदर्शन एवं सहायता।

(ब) नगर में पढ़नेवाले जनजाति छात्रों से सम्पर्क, उनकी समस्याओं के समाधान में सहयोग।

(क) कचहरियों में आनेवाले वनवासियों को नि:शुल्क परामर्श व सम्भव हो तो नि:शुल्क कानूनी मार्गदर्शन की व्यवस्था।

(ड) जहाँ सम्भव हो- परिचित वनवासी कार्यकर्ताओं की नगरों में रात्री निवास की व्यवस्था।

५) सामाजिक समरसता का निर्माण

वनवासी एवं नगरवासी स्नेहसूत्र में बँधजाय जो इस देश में कोई समस्या ही नहीं रह जायेगी। श्रद्धेय बालासाहबजी कहते थे कि 'समाज में एकात्मभाव निर्माण करना यही कल्याण आश्रम का कार्य है। एक-दूसरे के सम्पर्क में आने से पहचान खड़ी होती है, आत्मीयता बढ़ती है, संवेदना जागृत होती है, इससे सम्बन्ध गहरे होना स्वाभाविक है। स्वाभाविक क्रम में मिलने जुलने के उपरांत इस हेतु विविध कार्यक्रमों की रचना कि जाती है।

(अ) वनयात्रा- वनयात्रा के दौरान कार्यदर्शन के साथ साथ वनवासी परिवारों में निवास करने से ही अपने इन बान्धवों का सही परिचय मिलता है, उनकी सांस्कृतिक पहचान व 'अतिथि देवो भव'- का अनुभव होता है।

(ब) छात्र नगर यात्रा - किसी अवसर पर प्रतिवर्ष छात्रावास के बालकों को अपने परिवारों में दो-तीन दिन ठहरने का अवसर-निमंत्रण देना।

(क) वनवासी परिवारों को स्नेहमिलन कार्यक्रम निमित्त नगरों में बुलाना। 'हम एक परिवार के है ऐसी अनुभूति अपने परिवारों में ठहरते हुए अपने अनुभव से उनको कराना।

(ढ) रक्षाबंधन एकात्मभाव को मजबुत करने बंधुत्वभाव को दृढ़ करने का अपनी सांस्कृतिक परम्परा का आधार है- रक्षाबंधन उत्सव। नगरों से कार्यकर्ता सपरिवार वनक्षेत्र के गावों में राखी का स्नेहसूत्र लेकर जाते है। 'तु मैं एक रक्त' का सूत्र साकार होता है। कहीं -कहीं छात्रावास के बच्चों को नगरों में बुलाने की परम्परा भी है। नगरों में बच्चों के साथ राखीबंधन मनाया जाता है।

(ई) कुछ विशेष प्रयोग- मातृहस्त भोजन-सहभोजन के कार्यक्रम

पारिवारिक भाव सुदृढ़ करने की दिशा में सामुहिक भोजन बनाकर वनवासी कार्यकर्ता-परिवारों के लिए भोजन ले जाते है। सभी साथ मिलकर भोजन करते है। दिल्ली, गुवाहाटी, अमरावती ऐसे कई स्थानों पर कार्यक्रमों से 'एक परिवार' की

भावना सुदृढ होती दिखाई पडती है।

६) आर्थिक विकास के कार्य में सहभागीता

वनवासी अंचल में आर्थिक समस्या प्रमुख समस्या है। नगरीय कार्यकर्ताओं के प्रयास से इस दिशा में परिणाम मिल रहे है। अपने वनवासी बांधवों में विकसीत होने की आकांक्षा जगाते हुए वे भी जीवन में प्रगति पथ पर आगे बढ़ सके इस हेतु उनकी आय बढ़ाने के विभिन्न पहलूओं में सहभागी हों यह नगरीय बन्धुओं से अपेक्षीत है।

(अ) उत्पादन बढ़ाने की तकनीक में मार्गदर्शन।

(ब) विपणन (मार्केटिंग) में सहयोग - उत्पादित वस्तुओं की खपत में सहयोग।

(क) उनको उत्पादन के सही दाम मिले उस हेतू प्रयास। इस सन्दर्भ में - १) सही तोलमाप २) सही दाम ३) सहकारी (को-ऑपरेटिव) सोसायटी बनाकर विक्रय की पद्धति।

(ड) अपने सम्पर्क के आधार पर उनको रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना।

इस कार्य से वनवासी बन्धुओं को समाधान तथा उनका विकास होगा। साथ-साथ नगरों में रहनेवाला विशाल समाज खासकर महिलाओं को समाज सेवा में प्रेरित करने का एक सही माध्यम बन सकता है। इस सन्दर्भ में कहीं कहीं विक्री केन्द्र प्रारम्भ करने के प्रयोग हुए है।

७) धन संग्रह एवं साधन संग्रह

नगरों से होनेवाले कार्यों में यह भी एक आवश्यक महत्वपूर्ण कार्य है। यह कार्य सम्पन्न करने हेतु, सहयोग प्राप्त करने के लिये विविध योजनाएँ बनायी जा सकती है। यह कार्य दयाभाव से नहीं दायित्व के भाव से हो यह अपेक्षित है। धन-साधन संग्रह हेतु -

(१) सेवापात्र योजना - परिवार में, दुकानों पर, ऑफिस में सेवापात्र रखे जाते है, जिसमें नियमित संग्रह होता है।

(२) अभियान - वर्ष में एक बार अभियान चलाते हुए अधिक लोगों से संग्रह करना। जिसमें विविध कार्यों, योजनाओं हेतु सहयोग मांगा जा सकता है। एक साथ अधिक जनसंग्रह करने में जुटते है।

(३) मंगल स्मृति योजना - परिवार में खुशी के प्रसंगों तथा उत्सवों आदि पर वनवासी कल्याण आश्रम के इस राष्ट्रीय कार्य के लिये सहयोग देने हेतु प्रेरित करना।

(४) मकरसंक्रांति के समय पर धान्य एवं अन्य चीज वस्तुओं का संग्रह।

(५) वनमित्र योजना - के अंतर्गत स्कूलों में पढ़ रहे बच्चों में सहयोग की भावना

जगाना।

इस प्रकार शहरी क्षेत्र में अनेक प्रकार के काम है जिनके द्वारा हम- वनबन्धुओं को उनके हित के इस कार्य में उपयोगी हो सकते है। उन्हें अपने कार्य के साथ जोड़ सकते है।

इस हेतु नगरीय समाज के मन में भावजागरण करते हुए, जिनके मन में ऐसे कार्य हेतु संवेदना व इच्छा है ऐसे लोगों का चयन करते हुए सुदृढ़ संगठनात्मक ढ़ाँचा खड़ा करने के प्रयास चल रहे है। इससे कल्याण आश्रम के उद्देश्यों को सफल करने में नगरीय कार्य (नगरीय समाज) अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

अपने नगरीय कार्य का असर भी दिखने लगा है। देश भर में असंख्य लोग दायित्वभाव से इस कार्य में लगे है। भ्रांतियों को फैलानेवाले स्वार्थीतत्व उजागर हो रहे है। भ्रमों का कोहरा दूर होते हुए कर्तव्यों के प्रति जागृति बढ़ रही है।

आज नगरवासी इस कार्य को राष्ट्रीय आवश्यकता एवं चुनौती के रुप में देखते हुए सम्पूर्ण देश भर में- वनांचल के इस पवित्र कार्य में सक्रिय होते दिखाई पड़ रहा है। यही कारण है कि नगरों-महानगरों से आवश्यकतानुसार धन, साधन सरलता से एकत्र हो रहे है। बड़े-बड़े कार्यक्रम प्रभावी ढंग से सम्पन्न हो रहे है। समाज आत्मीयता का भाव लिए अपने कार्य में आगे आता दिख रहा है। अगर लगन एवं सातत्यपूर्वक लगे रहे तो नगरीय कार्य तीव्र गति से बढ़ेगा यही संकेत है।

चलो जलायें दीप वहाँ, जहाँ अभी भी अंधेरा है।

■

सम्पर्क आयाम

वनवासी कल्याण आश्रम के कार्य का विकास, एक पुष्प जैसे खिलता है, वैसे समय के चलते क्रमशः खिलते गया। कार्य जशपुरनगर जैसे सुदूर वनवासी क्षेत्र में एक छोटे से छात्रावास से प्रारम्भ हुआ और धीरे-धीरे सारे देश में विविध प्रकार के आयामों के विकास के साथ आगे बढ़ते गया। सम्पर्क आयाम का जन्म भी ऐसे ही कार्य विकास के साथ हुआ।

कार्यकर्ताओं की बैठकों में हुए चिंतन में से एक विचार प्रगट हुआ। देश के वनवासी क्षेत्र में जैसे हम काम कर रहे हैं, वैसे कई व्यक्ति एवं संस्थाएँ भी अपने जैसे वनवासी बन्धुओं के उत्थान हेतु कार्यरत हैं। उन सभी से सम्पर्क करना चाहिए। इस हेतु अखिल भारतीय स्तर पर एक अधिकारी को काम का जिम्मा दिया गया। सारे देश में प्रवास शुरू हुआ।

प्रान्त-प्रान्त में ऐसी संस्थाओं से जुड़े जनजाति व्यक्ति और विशेषज्ञों के नाम निकाले गए। फिर चला सम्पर्क का दौर। एक हजार से अधिक व्यक्तियों एवं संस्थाओं से सम्पर्क किया गया। कुछ संगठन अपनी-अपनी जनजातिओं के पारम्परिक संगठन हैं, तो कुछ विशिष्ट उद्देश्यों से कार्य कर रहे हैं। एक विकास खण्ड, जिला से लेकर प्रान्त एवं अखिल भारतीय स्तर तक कुछ अपना-अपना कार्यविस्तार बढ़ा सके हैं। प्रायः सब इस

देश की मिट्टी से जुड़े विचार के साथ हैं, तो कुछ देश विरोधी ताकतें भी कार्य कर रही हैं। जनजातियों के विकास हेतु कई सरकारी, अर्ध सरकारी अथवा गैर सरकारी और स्वयंसेवी संगठन (NGO) हैं। अधिकांश संस्थाओं का अथवा संगठनों का कार्यक्षेत्र वनवासी क्षेत्र है। इसलिए कई संस्थाओं ने अपने केन्द्र अथवा कार्यालयों को वनवासी क्षेत्र में ही कार्यरत किया है। कुछ संस्थाएँ नगरों में रहकर वनवासी क्षेत्र में कार्यरत हैं। सभी संगठनों का लक्ष्य तो एक ही है - अपने वनवासी बन्धुओं की सेवा।

सभी को कुछ समान बिन्दुओं पर एक दूसरे का सहयोग लेते हुए कार्य करना चाहिए ऐसा विचार चिंतन में प्रबल रहा। कई प्रान्तों में इसके सन्दर्भ में विभिन्न स्तर पर बैठकों का आयोजन हुआ। कई नये-नये व्यक्ति इन बैठकों में सहभागी हुए। समूह चिंतन हुआ। इसमें से तय हुआ कि...

- इस प्रकार बार-बार मिलने की व्यवस्था होनी चाहिए।
- कभी न कभी अन्य संस्थाओं के केन्द्र अथवा प्रकल्पों को सभी भेंट दें।
- जनजाति समस्याओं से जुड़े मुद्दों के लिए परिसंवादों का आयोजन हो।
- विविध संगठन मिलकर विशेष अनुभवी जनजाति कार्यकर्ताओं का सार्वजनिक रूप से सम्मान करें।
- देशविरोधी षड्यंत्रों से जनजाति समाज को सजग करें।
- शिक्षा, आरोग्य, ग्रामविकास, जैसे, विषयों पर परस्पर सहयोग बढ़ायें। इत्यादि...

सम्पर्क का यही सूत्र कह सकते है..... हमारा गोत्र जनजाति, मंत्र समन्वय और उद्देश्य द्रुतगति से जनजाति समाज का सर्वांगीण विकास।

■

नगरीय वनवासी सम्पर्क

सन् १९४७ में अंग्रेज यहाँ से चले गये। अपने देशवासियों के हाथों में देश की बागडोर आई। विविध प्रकार की योजनाओं को कार्यान्वित किया गया। समय के चलते कुछ मात्रा में विकास भी हुआ। इसका लाभ अपने जनजाति बन्धुओं को भी मिला। शिक्षा का स्तर, रोजगार के अवसर, विविध प्राथमिक सुविधाओं की उपलब्धता इत्यादि। वनवासी क्षेत्र में ये सारा जितने प्रमाण में मिलना चाहिये उतने प्रमाण में मिला है कि नहीं, यह चर्चा का विषय हो सकता है। परन्तु कुछ भी विकास नहीं हुआ ऐसा नहीं है। इसके चलते अपने वनवासी बन्धु, जिन्होंने अच्छी शिक्षा प्राप्त की, उनमें से कुछ सरकारी अधिकारी बने, तो कुछ विविध व्यवसाय हेतु नगरों में आकर बसे। आज सारे वनवासी वन क्षेत्र में ही रह रहे हैं, ऐसा नहीं है। वनवासी अथवा जनजाति बन्धुओं की संख्या आज नगरों में भी हैं। चकाचौंध नगरीय जीवन में ये सारे कहीं खो न जाए, यह भी तो देखना होगा। अपने कार्यकर्ता बैठकों में 'नगरों में इन बन्धुओं से सम्पर्क की व्यवस्था होनी चाहिए' ऐसा विषय चला।

वर्तमान में छोटे-छोटे गाँवों मे रह रहे कई वनवासी बन्धु आरोग्य सेवा हेतु अथवा रोजगार पाने नगरों में आते हैं। वहाँ

वे जानकारी न होने से इधर उधर भटकते रहते हैं । नगर में रहनेवाले जनजाति बन्धुओं को ऐसे बन्धुओं की सहायता करनी चाहिए । साथ-साथ नगर में रहनेवाले जनजाति भाई अपने गाँव को भूल जायें, यह भी तो ठीक नहीं है । उन्होंने भी समय-समय पर अपने गाँव जाकर वहाँ कुछ विकास हो, इस हेतु कार्य करना चाहिए । ग्रामीण भाइयों को कुछ न कुछ मार्गदर्शन करना चाहिए, ताकि वे भी विकास कर सके । इन सभी बातों के सन्दर्भ में नगरों में उनका सम्पर्क करना, सम्पर्क कर प्रबोधन करना आवश्यक हो गया । इसी में चल पड़ा नगरीय जनजाति सम्पर्क विभाग । धीरे-धीरे इस विषय के सन्दर्भ में भी कार्यकर्ताओं ने कार्य करना प्रारम्भ किया । इसमें नगरीय कार्यकर्ताओं की बड़ी भूमिका रही । विविध प्रकार के अनुभव सामने आये । जैसे-जैसे कार्य चला, उसके चलते इस आयाम का महत्त्व अपने आप ध्यानाकर्षित करते गया । कार्य की समग्र योजना में ऐसे विविध आयामों का अपना-अपना महत्त्व होता है । सबकी अपनी-अपनी गति होती है । हम यदि कार्य करते हैं तो समाज हमें अवश्य सहयोग करता है, इसकी भी अनुभूति होते रहती है । आवश्यकता है केवल सतत कार्य करते रहने की ।

■

प्रचार-प्रसार

जानकारियों का संकलन कर सम्बन्धित क्षेत्रों में संप्रेषण को प्रचार-प्रसार कहते हैं। वनवासी कल्याण आश्रम का प्रचार विभाग अपने वनवासी समाज की विशेषता एवं श्रेष्ठता को तथा कल्याण आश्रम के कार्य एवं परिणामों से जुड़े विषयों की जानकारियों को एकत्र कर व्यक्ति एवं इकाइयों को प्रेषित करता है। हमें वनवासी क्षेत्र की समस्या तथा चुनौतियों को भी उजागर करना है। यह भी प्रचार-प्रसार विभाग के कार्य का ही एक अंग है।

इस प्रकार का कार्य करते-करते एक बात स्पष्ट होना आवश्यक है कि हम प्रचार-प्रसार का कार्य रहे हैं, प्रचार प्रसिद्धि का नहीं। दोनों में अन्तर है। अपने विचार, अपने कार्य का प्रचार-प्रसार होना आवश्यक है, परन्तु यह करते करते कहीं हम प्रसिद्धि प्राप्त करने के पीछे पड़े तो भटकने की पूरी सम्भावना है। सभी कार्यकर्ताओं को इस सन्दर्भ में सजगता रखना अतीव आवश्यक है।

प्रचार-प्रसार क्षेत्र में हमें सदैव समय के साथ चलना होता है। इसलिए ऐसे माध्यमों का उपयोग करना है जो युगानुकूल हों। आज अन्तरताने (इंटरनेट) का युग है। सभी जानकारियों को तत्काल अथवा कम से कम समय में सही स्थान से प्राप्त कर

प्रचार कर सके ऐसे योग्य व्यक्ति अथवा माध्यम तक पहुँचना होता है। इस प्रक्रिया में हम समाचार पत्र-पत्रिकाएँ, दृश्य-श्राव्य साधन जैसे कि ऑडियो सी.डी., वीडीयो सी.डी., फोन, फॅक्स, ई-मेल जैसे कई माध्यमों का उपयोग करते हैं। समाज को अपनी जानकारियाँ चित्र प्रदर्शन के माध्यम से भी देते हैं। इससे अपनी बात को हम जीवंत स्वरूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। फोटो एल्बम, स्टिकर, कैलेण्डर जैसे माध्यम भी प्रभावी रूप में अपनी बात को प्रदर्शित करते हैं।

महाराष्ट्र प्रान्त द्वारा दिनदर्शिका प्रकाशन

न केवल नगरीय कार्यकर्ता अपितु प्रचार-प्रसार के कार्य में जुड़े अपने जनजाति कार्यकर्ता भी विविध कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं। कहीं विचारगोष्ठी का आयोजन तो कहीं किसी संगोष्ठी में पावर पोइन्ट प्रजेन्टेशन होता है। कहीं पर अपने कार्यक्रमों की जानकारी देनेवाली सी.डी. दिखाना, तो कही पत्रकार वार्ता का आयोजन करना, ऐसे विविध कार्यक्रमों का हम आयोजन करते हैं।

कल्याण आश्रम के कार्य एवं गतिविधियों के सन्दर्भ में समाज को जानकारी देने के लिए तथा अपने विचार को दृढ़ता के साथ प्रस्तुत करने के लिए हम विभिन्न प्रान्तों में कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन करते हैं। आज १५ प्रान्तों में १७ पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। सन्थाली समाज के बीच अपने कार्यकर्ता सन्थाली बोली में भी पत्रिका प्रकाशित करते हैं। वनवासी बालकों के लिए 'रानपाखर' नाम से एक त्रैमासिक मराठी पत्रिका पिछले कई वर्षों से महाराष्ट्र में प्रकाशित हो रही है। केन्द्रीय पत्रिका के रूप में दिल्ली से हिन्दी एवं अंग्रेजी में वनबन्धु मासिक पत्रिका प्रकाशित होती है। देश-विदेश के सभी पाठकों को सुविधाजनक हो इसलिए हम

कल्याण आश्रम की जानकारियाँ वेब-साइट के माध्यम से ही प्रेषित करते हैं। आज www.vka.org.in इस वेब साइट को नियमित रूप में देखनेवाले तथा अपनी प्रतिक्रिया भेजनेवाले पाठक भी हैं। प्रतिमाह हम २००० से अधिक व्यक्तियों तक कल्याण आश्रम से जुड़ी जानकारियाँ ई-मेल के माध्यम से 'मासिक समाचार पत्र' (Monthely News Letter) भेजते हैं।

प्रचार-प्रसार के विश्व में हमें सदैव सिद्ध रहना आवश्यक है। देर होने से उद्येश्यपूर्ति नहीं होती। कार्यकर्ता जितना करें उतना कम ही है। आकाश विशाल है। कार्य क्षितिज विस्तीर्ण है। विविध आयामों की तरह इस प्रचार-प्रसार विभाग से जुड़े कार्यकर्ता कई प्रकार से सक्रिय हैं और समय-समय पर समाज से भी सहयोग हमे मिलता ही है।

■

वन एवं वनवासी

वनवासियों का वन से अटूट नाता है। वन में रहना, वन को सम्हालना, वन का दोहन करना, यही सहज रूप में जीवन का क्रम है। आज देश में उद्योगों के विकास के कारण कुछ वनवासी बन्धुओं का नगर में अर्थोपार्जन के लिए आना हुआ है, फिर भी अधिकाँश वनवासी वन में ही रहते हैं।

वन कटाई देश की सार्वत्रिक समस्या है। कुछ स्वार्थी तत्व इस वन कटाई के लिए वनवासी समाज को जिम्मेवार मानते हैं, परन्तु सत्य कुछ और है। वास्तव में आज भी वन को सम्हालने के काम में वनवासी समाज ही अग्रेसर है। नगरों की तरह वनवासी क्षेत्र में वृक्षारोपण के सार्वजनिक कार्यक्रम नहीं होते हैं। वृक्षारोपण तो वनवासियों का सहज स्वाभाविक क्रम है। जिस समाज ने वृक्ष को देव माना है, वह भला वृक्ष का निकंदन करनेवाला कैसे हो सकता है ?

वृक्षारोपण के सार्वजनिक कार्यक्रम आयोजित कर वृक्षारोपण करने के पश्चात उन वृक्षों की सुरक्षा की कोई योजना नहीं, साधारणतः ऐसा अनुभव आता है। इसलिए कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता घर-घर सम्पर्क कर वृक्षों के पौधों का प्रतिवर्ष वर्षाकाल में वितरण करते हैं। हजारों की संख्या में पौधों का वितरण होता है। समाज से भी अच्छा प्रतिसाद मिलता है। घर-घर जाकर पौधों का वितरण करने के कारण

विद्यालय परिसर में वृक्षारोपण

वृक्षारोपण के पश्चात सुरक्षा करने का प्रतिशत अपने आप बढ़ता है। इसलिए वन विभाग के अधिकारियों का भी सहयोग मिलता है।

वर्तमान समय में सारे विश्व में 'ग्लोबल वॉर्मिंग' की चर्चा है। पर्यावरण का जतन करने हेतु एक सामाजिक संस्था के नाते वनवासी कल्याण आश्रम भी कार्यरत है। दादरा नगर हवेली प्रांत में पत्रिका, पोस्टर, स्टिकर्स, बैनर जैसे प्रचार साहित्य का निर्माण कर वृक्षारोपण के सन्दर्भ में समाज जागृति के प्रयास किये हैं। वनवासी कल्याण आश्रम, महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं ने भी एक लाख से अधिक वृक्ष पौधों के रोपण के प्रयास किये हैं।

विश्वस्तरीय सम्मान

यहीं पर धुलिया (महाराष्ट्र) जिले के साकरी विकास खण्ड के बारीपाडा गांव का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। अपने कार्यकर्ता के प्रयाासों से ग्राम विकास हो रहा है। कुछ समयपूर्व ग्रामवासियों ने विविध प्रकार की समितियाँ गठित की। उसमें एक वन व्यवस्थापन समिति भी थी। वृक्षारोपण के प्रयासों के साथ साथ वृक्ष कटाई न हो इसलिये दंडात्मक कार्यवाही होनी चाहिये, एसा विचार हुआ। समिति ने प्रतिबंधित क्षेत्र निश्चित कर नियमावली बनाई। एक सुरक्षाकर्मी को जंगल सुरक्षा का काम दिया गया। जो अवैध वृक्ष कटाई करेगा उसे रु. १०५१/- का दंड, प्रतिबंधित क्षेत्र में जो बैल गाडी ले जायेगा उसे रु. ७५१/-, लकडी सिर पर उठा कर ला सके ऐसे कटाई के लिये रु. ५५१/-, ऐसा दंड निश्चित हुआ। अवैघ वन कटाई की जानकारी देनेवाले को रु. १५१/- का पुरस्कार घोषित हुआ।

परिणामस्वरूप कुछ समय पश्चात गांव के चारों ओर वन संपदा में विशेष वृद्धि हुई। पहले गांव से जंगल दूर था, अब मानो गांव स्वयं ही जंगल में बस गया। ग्रामवासियों के प्रयास देख प्रशासकिय अधिकारी भी सहयोग देने लगे।

सन् १९९०-९१ से चले इन प्रयासों के चलते सन् २००३ में बारीपाडा गांव को विश्वस्तरीय द्वितीय पुरस्कार मिला। International funds for Agriculture Development पुरस्कार प्राप्त करने कार्यकर्ता सिंगापुर गये थे। आगे चल कर ग्राम आधारीत विविध उद्योग जैसे बांबु के आधार पर कुछ वस्तुएँ बनाना, रस्सी बनाना इत्यादी प्रारम्भ हुआ। कुछ समय बाद केन्द्रीय ग्राम विकास मंत्री श्री एम. के. पाटील स्वयं बारीपाडा पधारे। उन्होंने बारीपाडा के इस ग्राम विकास पॅटर्न की घोषणा की तथा बारीपाडा ग्रामवासियों का अभिनंदन किया। हम इस बात का गौरव है की इन सभी प्रयासों में जिनका विशेष प्रयास है एसे अपने कार्यकर्ता आज महाराष्ट्र प्रांत का उपाघ्यक्ष के रूप में वनवासी कल्याण आश्रम के कार्य में कार्यरत है। उनके प्रयासों आज महाराष्ट्र के अन्य कुछ गांवों में भी ग्राम विकास का कार्य चल रहा है। लोक सहभागीता के आधार पर वन संपदा का जतन एवं संवर्धन कैसे हो सकता है और इससे अपने वनवासी बन्धुओं के माध्यम से ग्राम विकास कैसे हो सकता है, यह दोनों के सन्दर्भ में कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता ने स्वयं प्रयोग कर दिखाएं, जो आज महाराष्ट्र में बारीपाडा पॅटर्न के नामसे जाना जाता है।

कल्याण आश्रम के कार्यकर्ता पर्यावरण के जतन हेतु वृक्षारोपण, भूमि संरक्षण से लेकर जल प्रबंधन जैसे विविध प्रकार के प्रयास करते ही हैं। देश में इस सन्दर्भ में विविध व्यक्ति एवं संस्थायें विचारगोष्ठी से लेकर विविध प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं। कुछ व्यक्ति, संस्था तथा कुछ प्रशासकीय अधिकारी भी सकारात्मक रूप में इसके सन्दर्भ में प्रत्यक्ष कार्य करते दिखाई देते हैं। कल्याण आश्रम भी कृतिरूप प्रयास करनेवालों में से एक है, यह अलग से कहने की आवश्यकता नहीं।

■

अपना उत्तर पूर्वांचल

उत्तर पूर्व भारत के सातों राज्य, जंगल-नदी-उत्तुंग पर्वतों से व्याप्त नैसर्गिक दृष्टि से सम्पन्न क्षेत्र है। असम, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, नागालैंड, मणिपुर, त्रिपुरा व मिजोरम यह सभी राज्य जनजाति बहुल क्षेत्र हैं। हर जनजाति की अपनी-अपनी भाषा, उत्सव, पोषाक, गीत, नृत्य, परंपरा, पूजा-पद्धति अलग-अलग है और वही इसकी पहचान है। इस विविधता को विदेशी मिशनरियों ने विभेदों में दर्शाया और कहा कि आप जनजाति बंधु बाकी भारतीयों से अलग हैं। आप मंगोलियन हैं और बाकी भारतीय आर्य जाति के हैं और इस प्रकार गलत कहानियाँ प्रसारित कर सेवा के माध्यम से धर्मांतरित किया। धर्मांतरित समाज की संस्कृति नष्ट हुई, भाषा बदली-पहचान खतरे में आयी। भारतीय समाज से अपने ही बंधुओं को अलग करने का यह विदेशी षड्यंत्र विगत २०० वर्षों से चल रहा है। भोले-भाले, अनपढ़ जनजाति बंधुओं को छल-कपट-लोभ-मोह-भ्रम-भय-लालच से धर्मांतरण का यह दु:श्चक्र विदेशी पैसा-साधन मानव संसाधन, राजकीय सत्ता के द्वारा अबाध गति से चल रहा है। धर्मांतरण के कारण इस क्षेत्र में आतंकवाद पनपा और अलगाववाद को बढ़ावा मिला।

इस परिस्थिति में वनवासी कल्याण आश्रम का चुनौती भरा

कार्य विगत ३० वर्षों से चल रहा है। कल्याण आश्रम के कार्यकर्ताओं ने विविध जनजाति की ऊपरी विविधता में अंतर्निहित सांस्कृतिक एकता के सूत्र का अध्ययन किया और उसे पुष्ट करने हेतु विविध कार्यक्रम आयोजित किये। 'भूमि अपनी माता है', यह धारणा सारे भारत में समान रूप में व्याप्त है। अपने वनवासी बंधुओं में भी हमें इसकी अनुभूति होती है। कार्य करते-करते ऐसी अनेक समान धारणाएँ सामने आयीं जिस आधार पर हम कहते है, कि 'हर जनजाति बंधु मेरा अपना है'- 'तू मैं एक रक्त।'

पूर्वांचल में कल्याण आश्रम के मुख्य पांच कार्य

१. जागरण – कल्याण आश्रम जनजाति समाज के अंदर श्रद्धा व धर्म जागरण का कार्य करता है। विविध जनजातियों के बंधु अपने परंपरागत धर्म-संस्कृति की रक्षा करना चाहते हैं। कल्याण आश्रम ऐसे लोगों को सहयोग देता है और अपनी धर्म-संस्कृति का संरक्षण व संवर्धन करने में मददगार सिद्ध होता है। आज देखते-देखते साठ जनजाति संगठन स्वधर्म रक्षा हेतु खड़े हो गये हैं।

श्रद्धाकेंद्र अरुणाचल

सभी ने निराकार परमेश्वर को साकार रूप दिया। समय की माँग समझकर समाज में स्वयं श्रद्धाकेंद्र बनाने की पद्धति प्रारम्भ हुई-पूजा पद्धति विकसित हुई-भक्ति गीत गाये जाने लगे - स्वधर्म रक्षा का आंदोलन खड़ा हुआ। जनजातियों के स्वधर्म सम्मेलन हर वर्ष होने लगे। उनकी परंपरा-गीत-प्रार्थना आदि धार्मिक-सांस्कृतिक पहलुओं पर अध्ययन कर साहित्य (पुस्तक, कैसेट, लॉकेट, फोटो, स्टिकर्स) वितरण शुरू हुआ।

२ अप्रैल २००२ को विविध जनजाति संगठन के प्रमुखों को सम्मिलित कर 'जनजाति धर्म-संस्कृति सुरक्षा मंच' का गठन किया गया। उसके तत्वावधान में जनगोष्ठी (सेमिनार) का आयोजन किया गया – जागता पूर्वांचल, आपरेशन नॉर्थ ईस्ट, जैसे जनजाति प्रमुखों के भ्रमण कार्यक्रम सम्पन्न हुए। दिनांक २४ से २८ दिसम्बर २००६ को गुवाहाटी में पांच हजार जनजाति युवकों का सम्मेलन सम्पन्न हुआ। उसकी विराट शोभायात्रा व मातृहस्ते भोजन का सामाजिक समरसता का कार्यक्रम अभूतपूर्व रहे। दिनांक २५ दिसंबर २००६ को गुवाहाटी में सम्मेलन के प्रतिनिधियों की शोभायात्रा निकली उसमें युवक नारे लगा रहे थे 'देश की रक्षा कौन करेगा – हम करेंगे, हम करेंगे', 'धर्मांतरण बन्द करो!', 'अरुणाचल किसका-भारत का, भारत का !' ऐसे देश व धर्म रक्षा के प्रति कटिबद्धता दर्शाने वाले नारे दिये गये। इस सारे आंदोलन का नेतृत्व कर रहे हैं मा. विक्रम बहादुर जमातियाजी व मा. जलेश्वर ब्रह्म। इन सारे कार्यक्रमों से स्वधर्म जागरण आंदोलन को गति प्राप्त हुई।

धर्म जागरण के साथ राष्ट्रभक्ति जागरण हेतु भी विविध कार्यक्रम चलते हैं। जिन महापुरुषों ने देश रक्षा हेतु बलिदान दिया, ऐसे वीरों का जन्मदिन व शहीद दिवस मनाना – रानी गाइदिन्ल्यु, हेपाउ जादोनांग, डिमासा वीर शंभूघन फुंगलो आदि वीर पुरुषों के शहीद दिवस मनाये जाते हैं। दिनांक २७ मई २००९ को नागालैण्ड के मोन जिले में स्थित चुई गांव के वीर गामचिंग कोन्याक (गामचिंग कोन्याक) का शहीद दिवस बड़े पैमाने पर मनाया। उन्होंने कारगिल युद्ध में हौतात्म्य स्वीकार किया।

२. सेवा – सेवा के अंतर्गत शिक्षा हेतु औपचारिक विद्यालय, प्राथमिक विद्यालय, बाल संस्कार केन्द्र व अध्ययन केन्द्र चलते हैं। पूरे क्षेत्र में २९ छात्रावास चलते हैं जिनमें लगभग ९०० छात्र-छात्राएँ पढ़ती हैं।

स्वास्थ्य रक्षा हेतु चिकित्सा शिविर, चिकित्सा केन्द्र व आरोग्य रक्षकों द्वारा हर वर्ष लगभग ५० हजार रुग्णों की चिकित्सा की जाती है। अरुणाचल प्रदेश में गत वर्ष कैन्सर व आँखों की चिकित्सा हेतु विशेष चिकित्सा कार्यक्रम आयोजित किये गये।

३. हितरक्षा – जनजाति समाज के हितों की रक्षा के लिये कार्य किये जाते हैं। मिजोरम के रियांग शरणार्थी बंधुओं की सब प्रकार की सहायता लगभग सात वर्षों तक की गयी और उनको न्याय दिलवाया।

सन् २००५ में कार्बी आंग्लांग में कार्बी व डिमासा समाज के बीच संघर्ष करने

का दु:श्चक्र कल्याण आश्रम के प्रयासों से विफल किया गया। दोनों समाजों में समन्वय स्थापित कर समाज विरोधी शक्ति की असलियत को उजागर किया।

समय-समय पर राहत कार्य भी बड़े पैमाने पर करते हैं।

विदेशी घुसपैठियों द्वारा अवैध अतिक्रमण की गयी जमीन को संगठित प्रतिकार से मुक्त करने का सफल प्रयोग सिल्चर, असम में हुआ।

अक्टूबर २००८ में उदालगुड़ी जिलें में विदेशी घुसपैठियों द्वारा सुनियोजित, संगठित आक्रमण के समय कल्याण आश्रम ने राहत कार्य व संगठित समन्वय का कार्य किया। समाज का हौसला बढ़ाया।

४. **विकास** - स्थानिक संसाधनों का व कौशल का उपयोग करते हुए जनजाति समाज में आर्थिक विकास व कृषि विकास करने के प्रयास चल रहे हैं।

युवा प्रतिभाओं के विकास हेतु ग्रामीण स्तर से राष्ट्रीय स्तर तक एकलव्य खेलकूद प्रतियोगिताओं का आयोजन करते है। विकास यह निरंतर प्रक्रिया है। अपने वनवासी बंधुओं के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य लेकर हम पिछले छह दशकों से कार्यरत है। विविध अनुभवों के आधारपर आज भी यह कार्य सामूहिक प्रयासों से चल रहा है।

५. **संगठन** - संगठन की सबसे छोटी इकाई है - ग्राम समिति। ग्राम से लेकर अखिल भारतीय स्तर तक की समितियों के माध्यम से अपना कार्य भारत के सारे वनवासी क्षेत्र में व्याप्त है। ऊपर वर्णित सभी प्रकार के काम करना लेकिन सबसे महत्त्व की बात है, ग्राम, मंडल, जिला, विभाग, प्रान्त एवं अखिल भारतीय स्तर तक सांगठनिक इकाई कार्यरत रहे इस हेतु विविध प्रकार के प्रयास करना। जैसे कि बैठकें करना, प्रशिक्षण वर्ग... इत्यादी।

कल्याण आश्रम के कार्य में कार्यरत एक कार्यकर्ता ने अनौपचारिक बातचित में अपना मनोगत व्यक्त करते हुए कहा की...

''भारत के सभी वनवासी क्षेत्र का और विशेषत: उत्तर पूर्वांचल का कार्य निश्चित ही कठीण है। अंत: वह करने योग्य है। समय की आवश्यकता है।'' देश के विविध राज्यों से आयें कई कार्यकर्ता पूर्वांचल के सुदूर वन क्षेत्रों में वर्षों से कार्य कर रहे है। मानो, एक तपश्चर्या।

एक बार इस समाज को मैंने 'अपना' माना है, तो उसके लिए चाहे कितने भी कष्ट उठाने पडे, सभी का सहर्ष स्वागत है। उत्तर पूर्वांचल के जनजाति बन्धुओं की समस्याओं के समाधान हेतु भले कितने भी वर्ष लगे, हम कार्य में लगें रहेंगे, ऐसा विश्वास हमारा सम्बल है। ■

कार्य की उपलब्धियाँ एवं प्रभाव

कल्याण आश्रम की वर्षों की नि:स्वार्थ साधना अब फलीभूत होने लगी है। वस्तुत: कल्याण आश्रम वनांचलों में विकास की नयी अरुणिमा लेकर उदित हुआ।

हमने सेवा एवं संगठन प्रकल्पों के माध्यम से वनवासी बंधुओं से सम्पर्क साधा है और यह प्रवाह निरंतर वर्धमान है। प्रतिवर्ष हम नए-नए सेवा प्रकल्प प्रारम्भ कर रहे हैं। यदि एक वाक्य में कहना हो तो कल्याण आश्रम का कार्य समाज में परिवर्तन लाने का है और वह भी रचनात्मक एवं सकारात्मक रूप से।

आज वनवासी समाज की जनसंख्या १० करोड़ और भारत की जनसंख्या १२५ करोड़ के लगभग होगी। शासन के पास कानून की शक्ति, आर्थिक शक्ति और कर्मचारियों की शक्ति बहुत बड़ी है, फिर भी वह अपेक्षित रूप से सफलता प्राप्त कर रहा है ऐसा नहीं कहा जा सकता। कल्याण आश्रम के पास शासन या कानून की शक्ति नहीं है। आर्थिक व कार्यकर्ता शक्ति के मामले में वह शासन के पासंग के बराबर भी नहीं है। अस्तु, फिर भी यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कल्याण आश्रम दृढ़ता के साथ आगे बढ़ा है।

वनवासी का स्वाभिमान जागा है। उसकी अस्मिता जाग

रही है। शिक्षा के प्रति रुझान और आकर्षण बढ़ा है। उत्तर प्रदेश के श्रीराम वनवासी छात्रावास का रजत जयन्ती समारोह दिसम्बर २००९ में मनाया गया। उत्तर पूर्वांचल के पूर्व छात्रों को आंमत्रित किया गया था। २५ छात्र और उत्तर पूर्वांचल के संगठन मंत्री, क्षेत्र संगठन मंत्री व अन्य अभिभावक भी पधारे थे। एक नागालैण्ड का छात्र, जो हिन्दी के शब्द चुन-चुन कर प्रयोग कर रहा था। अपने विचार व्यक्त करते हुए उसने कहा – 'अभिशप्त जीवन से मुक्तिदाता श्रीराम वनवासी छात्रावास और यहाँ के कार्यकर्ता बन्धु हैं जिन्होंने नया जीवन दिया। समाज में जीने की कला सिखाई।' आज कल्याण आश्रम के शैक्षणिक प्रकल्पों में पढ़ने वाले बालक बालिकाएँ संस्कृत के श्लोक भी एकदम शुद्ध उच्चारण के साथ बोल सकते हैं।

शिक्षा के माध्यम से आये परिवर्तन का दिग्दर्शन कराने कुछ और घटनाओं का जिक्र प्रासंगिक होगा। अपने कार्यकर्ता जिला संगठन मंत्री श्री बाबूलाल को अपराधी तत्व अगवा कर ले गए और फिरौती माँगने लगे। छात्रावास के बालक और अभिभावकों ने उनके घरों को घेर लिया और बोले ये नि:स्वार्थ सेवा से हम लोगों को शिक्षित बना रहे हैं। आप सब हम लोगों के लिए क्या कर रहे हैं ? इन्हें तुरन्त छोड़िये अन्यथा घरों में आग लगा देंगे। वे बालकों के साहस और कार्यकर्ताओं की नि:स्वार्थ सेवा से प्रभावित हुए। तुरन्त बाबूलाल को छोड़ और भविष्य में हर सम्भव सहायता का आश्वासन दिया।

बाँदा की शान्ति देवी ने ग्राम प्रधानी में सबको पछाड़ कर चुनाव जीता। कोल जनजाति की यह महिला अपनी शिक्षा और दायित्व से सभी को सम्मोहित किए हुए है। उसके नि:स्वार्थ सेवा भाव की उसके विरोधी भी खुलकर प्रशंसा करते हैं। यह उनमें शिक्षा के प्रभाव के कारण सम्भव हुआ है। मिजोरम का छात्र डॉ. धनंजय रियांग, जिसके माता-पिता शरणार्थी शिविर में जीवनयापन कर रहे हैं, आज एम.बी.बी.एस. डॉक्टर बन कर भारत की राजधानी दिल्ली के 'एम्स' में सेवारत है। इसी प्रकार गोरखपुर का छात्र बी.एच.यू. वाराणसी से एम.डी. करने के बाद नागालैण्ड में अपनी क्लिनिक खोलकर गरीबों की सेवा कर रहा है और नागालैण्ड जनजाति संघ का अध्यक्ष भी है।

छात्रावासों / विद्यालयों से निकले छात्र, कृषि विभाग, पुलिस विभाग, राजस्व विभाग, सैन्य विभाग, प्रतिरक्षा विभाग में कार्यरत हैं। अपनी कर्तव्य परायणता से अधिकारियों के विश्वासपात्र हैं। संघ के स्वयंसेवक बनकर प्रचारक बने हैं, कार्यकर्ता बने हैं। पत्रकारिता में भी अग्रगणी हैं, यह है हमारे कार्य का सामाजिक प्रभाव। जहाँ छात्रावासों में अपने बच्चे भेजने में कतराते थे, आज होड़ लगी है।

उनका आर्थिक स्तर ऊंचा उठा है। स्वाभिमान जगा है, यह है कार्य का प्रभाव।

सोनभद्र के एक गाँव के लोगों ने मिलकर एक विद्यालय निर्माण कराया। इसाई मिशनरियों के अध्यापक ने बच्चों को शिक्षा देने का विश्वास देकर अपना कार्य प्रारम्भ किया। कुछ समय पश्चात अपनी छद्म सेवा की आड़ में इसाई बनाने का धन्धा प्रारम्भ कर दिया। यह भनक ग्रामीणों को लगी। अध्यापक को बाहर निकाल कर ताला बन्द कर दिया। शिकायत पर एस.डी.एम.जाँच के लिए पहुँचे। हकीकत जानकर अध्यापक को तुरन्त गाँव छोड़ देने का आदेश दिया। ग्रामीणों ने अपना स्वयं का अध्यापक रखकर शिक्षा देनी प्रारम्भ कर दी।

- चिकित्सा प्रकल्पों के माध्यम से स्वास्थ्य की अनुकूलताएँ आई हैं।

- श्रद्धाजागरण एवं सत्संग केंद्रों पर साप्ताहिक एकत्रीकरण ने न सिर्फ उनके पारिवारिक स्नेह एवं सद्भाव को वृद्धिगत किया है अपितु नशे की लत, जातीय विद्वेष एवं अलगाववाद पर भी रोक लगाई है।

- उत्तर पूर्व के राज्यों में संस्कृति समर्थक, राष्ट्रवादी संगठन दमखम के साथ काम कर रहे हैं। जो विरोध करने वाले थे वे प्रसंशक और सहायक हो गये हैं। जहाँ विभिन्न प्रकार के छपे पोस्टर 'Naga culture is Precious, Save it, Westernlization is threat to Naga culture' या 'Save culture Save Indentity' चिपकाने से खतरा खड़ा होगा ऐसा, डिमापुर में लग रहा था, वहाँ अब अलग माहौल दिखने लगा है। लगभग पंद्रह वर्ष पूर्व मुख्यमंत्री श्री शिलू माओ ने अपनी पुस्तक में लिखा कि इसाई मिशनरियों ने हमको पढ़ाया, यह तो अच्छा किया परन्तु इसके एवज में उन्होंने हमारी बहुमूल्य संस्कृति का अपहरण कर लिया। मिशनरी के लोग 'नागा कल्चर' (नागा संस्कृति) को डेमोनिक (शैतानिक) कहते थे। परन्तु कल्याण आश्रम के वहाँ पैर जमने पर चर्च में भी नागा – सांस्कृतिक कार्यक्रम होने लगे। मेघालय और यहाँ तक कि मिजोरम में भी कल्याण आश्रम अपना सांस्कृतिक संदेश देने में सफल हो रहा है।

वनवासी अब जाग उठे हैं। अपने विकास की पगडंडियां खुद तलाश रहे हैं। उनके जीवन स्तर, उनकी सोच और चेतना में भी अंतर आया है। सदियों से सोये वनवासी समाज की आँखों में आत्मविश्वास की चमक झाँकने लगी है। इस बात का पूरा ध्यान रखा गया कि यह समाज अपने इतिहास, संस्कृति और परंपरा की धारा को प्रवाहित रखते हुए अपनी जड़ों से ही अपनी शक्ति प्राप्त करे।

ग्राम विकास

मानव जीवन में विकास अर्थात भौतिक विकास, यह पश्चिम की एकांगी

अवधारणा है। मानव का सर्वांगीण विकास अपना लक्ष्य है। इस सर्वांगीण विकास में एक भौतिक विकास भी है। वनवासी समाज के लिए इस भौतिक विकास हेतु भी प्रयासों की आवश्यकता है। स्थानीय संसाधन व कौशल का उपयोग करते हुए जनजाति समाज में आर्थिक विकास व कृषि-विकास करने के प्रयास चल रहे हैं। कई राज्यों में अपने कृषि विकास केन्द्र चल रहे हैं। जिनके माध्यम से हम उन्नत कृषि का प्रशिक्षण देते हैं। गो पालन अथवा पशुपालन यह वनवासी जीवन से स्वाभाविक जुड़ा है। इस सन्दर्भ में भी आजकल कई प्रयोग चल रहे हैं। गोमूत्र से दवाइयाँ बनाना, गोबर से खाद और गोबर गैस बनाना जैसे प्रयोग भी कई स्थानों पर चल रहे हैं। अपने लोहरदगा (झारखण्ड) छात्रावास में पिछले कुछ समय से 'गो' आधारित कृषि विकास के प्रयास प्रारम्भ हुए है। देख़ते–देख़ते अच्छे परिणाम मिलना शुरू हुआ। वैसे ही दादरा नगर हवेली के सूर्य निकेतन, मोटा रांधा प्रकल्प पर भी 'गो संवर्धन केन्द्र' प्रारम्भ हुआ। कई वर्षों से गो सेवा कार्य में कार्यरत, कांदीवली (मुम्बई) के कार्यकर्ता की सक्रीयता के चलते विविध प्रयोग करना शुरू हुआ।

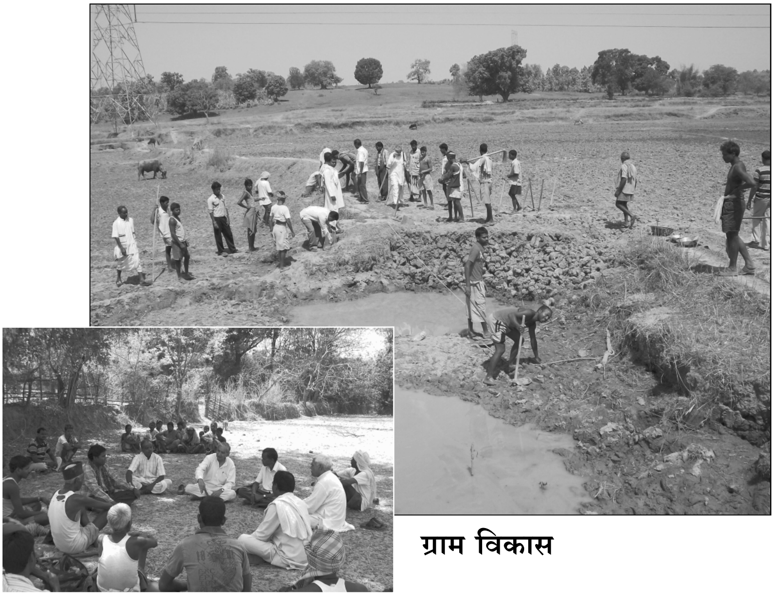

ग्राम विकास

कहीं-कहीं औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र चलाना, किसी एक विषय को लेकर विशेष प्रयास कर रोजगार के लिए प्रयास करना, जैसे कई उपक्रम चल रहे हैं। इस

हेतु समाज से कुछ विशेषज्ञों का सहयोग भी लिया जाता है। कई प्रशिक्षण वर्गों का आयोजन भी किया जाता है।

कल्याण आश्रम के कार्यकर्ताओं ने ग्राम विकास का कार्य हाथ में लिया। महाराष्ट्र के नंदूरबार जिले का बारीपाड़ा, आदर्श ग्राम के रूप में विकसित हुआ है। ग्राम बारीपाड़ा के रहने वाले वर्ष भर अपने गाँव में ही काम पाते हैं। पलायन पूरी तरह रुक गया है। यहाँ पर जंगल की आदर्श रूप से वृद्धि हुई है एवं पर्यावरण रक्षा आदर्श रूप से हो सकी है। अत: अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस गाँव को प्रसिद्धि मिली है। इस प्रकार नगर जिले की अकोले तहसील का ढ़गेवाडी गाँव का विकास भी संतुलित रूप से हुआ है एवं ग्राम से पलायन रुक गया है। महाराष्ट्र के लगभग १०० गाँवों में धान की खेती सुधारित पद्धति से की गई है, अत: प्रति एकड़ उत्पादन काफी बढ़ गया है। देखा देखी महाराष्ट्र के कई ग्रामों में सुधारित धान की खेती हो रही है। इनमें से कई ग्रामों में छोटे-छोटे बाँध बनाकर बागवानी को विकसित किया गया है। राजस्थान में ३०-४० गांवों में छोटे-छोटे बाँध बनाने के कारण खेती एवं बागवानी में उत्पादन बढ़ गया है। धान व अन्य अनाज की विकसित उत्पादन पद्धति के काम छत्तीसगढ़, उड़ीसा में भी प्रारम्भ किया है। इसके कारण प्रांतों के कुछ छोटे क्षेत्रों में परिवर्तन होने लगा है। गुजरात में भी कृषि कार्य को उन्नत करने के प्रयास चालू हो गये हैं और दो-तीन वर्षों में कुछ ग्रामों में इसका असर दिखने लगेगा, ऐसा कहा जा सकता है।

कहीं-कहीं सहकारी पद्धति से काम करने के प्रयास, तो कहीं कार्यकर्ताओं के वर्षों तक लगातार प्रयास, विकास का पथ प्रशस्त करते हैं। वन उपजों को एकत्र करना, उन पर प्रक्रिया करना जैसे उपक्रम भी चलाएँ जाते हैं। अपने प्रयासों के कारण गाँवों से नगरों की ओर आने का प्रमाण कम होना यह एक उपलब्धि कह सकते हैं। सरकारी अधिकारी भी इन प्रयासों से प्रभावित हैं, वे अपने कार्यकर्ताओं को इस सन्दर्भ में कई बार पूछते हैं - यह उपक्रम आपने किस प्रकार सफल किया ? कार्य के प्रति निष्ठा कहीं बाजार से नहीं मिलती है, साथ मिलकर कार्य करते हुए उसका निर्माण किया जाता है। विकास के क्षितिज चाहे कितने भी दूर क्यों न हो, हम उसकी ओर बढ़ने के प्रामाणिक प्रयास कर रहे हैं, जिसमें न केवल वनवासी समाज अपितु सम्पूर्ण समाज का बहुत अच्छा सहयोग मिल रहा है।

■

जागृति व संगठन

कल्याण आश्रम के कार्यों से जनजागृति हो रही है, वे संगठित होने लगे हैं। अत: शोषण रुकने लगा है। अपनी निज की परम्पराएँ, संस्कृति एवं धर्म के प्रति यथोचित रूप से गौरवभाव एवं स्वाभिमान जागृत हुआ है। वनवासी हिन्दू समाज से भिन्न एक अलग जाति है, यह प्रचार करने के लिए १९९३ में बिहार के चाईबासा में यूरोप और अमेरिका के अनेक देशों के पादरियों ने एकत्र होकर एक सम्मेलन किया। सम्मेलन का विषय था Indigenous people's Conference वनवासियों के बीच भाषण हुए। एक पादरी बोला तुम हिन्दू नहीं हो, तुम्हारी अलग पहचान है। तभी एक बूढ़े ने भरी सभा में उसका प्रतिवाद किया, सारे वनवासी उसके समर्थन में खड़े होते हुए बोले - तुम बाहर से आकर उपदेश देते हो, तुम्हें क्या मालूम है कि हम कौन हैं ? सारी सभा भंग हो गई और उन देशी-विदेशी पादरियों को वहाँ से जान बचाकर भागना पड़ा। अपने वनवासियों में यह जागृति है वनवासी कल्याण आश्रम के कार्य का सुफल। साथ ही अपने कार्यों द्वारा शुद्ध राष्ट्रभक्ति के भाव भी जगने लगे हैं। अरुणाचल एवं नागालैण्ड में अपने परम्परागत देवताओं के उपासना स्थलों का निर्माण कार्य होने लगा है एवं परम्परागत लोकोत्सव का आयोजन बड़े पैमाने पर

कई प्रातों में होने लगा है। नागालैण्ड की झेलियांग रोंग पहाड़ियों के जनजातियों के धार्मिक-सांस्कृतिक संगठन 'हरक्का एसोसिएशन' के अनुयायी अपना धार्मिक लोकोत्सव स्थानीय मतान्तरित नागाओं के डर से मना नहीं पाते थे। वर्ष १९८२ में एसोसिएशन को शाला, छात्रावास एवं चिकित्सा केंद्र का प्रारम्भ करने के लिए कल्याण आश्रम ने सभी प्रकार की सहायता दी। इससे एसोसिएशन का आत्मविश्वास बढ़ा और दूरदराज के गाँवों में १९८५ में पहली बार बड़े पैमाने पर उत्सव मनाना प्रारम्भ किया। मेघालय खासी एवं जयंतियां जनजाति के लोग पिछले २५ वर्षों से इस प्रकार से सामूहिक उत्सव मनाने लगे हैं। इन दोनों प्रान्तों में असंभव को संभव करने का प्रारम्भ कल्याण आश्रम के प्रवेश के कारण हो सका ऐसा कहना होगा।

विगत वर्ष में छोटा नागपुर में एक अलग प्रकार का आंदोलन सफलता के साथ हो गया। कुडुख (उरांव जनजाति की भाषा) भाषा में 'बाइबल सोसायटी ऑफ इण्डिया' बंगलूर ने लगभग आठ-नौ वर्ष पूर्व 'निम्हा-बाइबल' छापा था। इसमें इसायत में मतान्तरित लोगों को अलग से निर्देश दिया गया था कि वे अपने पूर्वजों के उपासना स्थलों को तोड़फोड़ दें, नष्ट कर दें। वर्ष २००८ में इसके विरोध में बहुत बड़ा और प्रभावी आंदोलन होने के कारण वहाँ के बिशपों ने सार्वजनिक रूप से माफी माँगी और उस पुस्तक को बाजार से वापस उठा लिया। हम समझ सकते हैं कि माफी माँगना यह मात्र दिखावटी कदम ही मानना होगा, हृदय परिवर्तन हुआ होगा इसमें संशय करने की काफी गुंजाइश है।

अस्तु, संक्षेप में इतना कहा जा सकता है कि जनजाति समाज अपनी पहचान को लेकर जागृत होता जा रहा है। ऐसा आत्मविश्वास एवं गौरवभाव से भरा संगठित समाज निश्चित रूप से अपना विकास भी निकट भविष्य में कर सकेगा, ऐसा हम कह सकते हैं। हम यह भी कह सकते हैं कि वनवासी कल्याण आश्रम की ओर वनवासी-जनजाति समाज आशा भरी दृष्टि से निहार रहा है। राष्ट्र में समरसता के भावों को दृढ़ करने के लिए कार्य करनेवाली संस्थाओं में कल्याण आश्रम अग्रगण्य एवं सबसे बड़ी और सबसे तेजी से विकसित होनेवाली संस्था हो गयी है। सच ही कहा गया है कि संस्था के रूप में कार्यरत कल्याण आश्रम, एक आंदोलन, एक विचार बन गया है। हमें विश्वास है कि निकट भविष्य में कल्याण आश्रम अपने पवित्र एवं राष्ट्रीय उद्देश्यों को प्राप्त करने में अवश्य ही सफल होगा।

■

आव्हान : आपसे अपेक्षा

क्रांति की जो अनौखी यात्रा वनयोगी ने प्रारम्भ की उसे ठिठकने नहीं देना है । बहुत बड़े पैमाने पर कार्य करने की आवश्यकता है । सारे समाज में समरसता जाग्रत करना ही लक्ष्य है । 'ये मेरे अपने ही हैं' उनकी सेवा अपना ही काम तथा ईश्वर की सेवा जैसा है, यह भाव लेकर ही वनवासी समाज के बीच जाने की आवश्यकता है ।

आप जैसे प्रबुद्ध, संस्कारक्षम, राष्ट्रहितैषी से यह अपेक्षा है कि आप इस पुनीत कार्य में अपना शारीरिक, बौद्धिक और आर्थिक सहयोग देकर राष्ट्र के निर्माण में भागीदार बनेंगे ।

कल्याण आश्रम का कार्य राष्ट्र निर्माण का मूलभूत कार्य है । हमारे कार्य का प्रभाव एवं स्वीकृति हमारे गर्व एवं अहंकार की वृद्धि में योगदान नहीं देते अपितु हमें गुरुतर दायित्व के प्रति जागरूक करते हैं । आगे आने वाले वर्षों में हमे नई चुनौतियों को स्वीकार करते हुए नए संकल्प, कार्य के प्रति निष्ठा, वनवासी बंधुओं के प्रति आत्मीय संवेदना के साथ अग्रसर होना है । समर्थ और शक्तिशाली भारत के निर्माण में समाज के सभी वर्गों के सहयोग की जरूरत है । जंगल में रहने वाले लोगों को अपना बंधु मानकर उनकी सेवा करें और समाज के साथ जुड़कर उन्हें साथ लेकर चलें ताकि वे जागें और जागकर

फिर कभी तन्द्रा में न आयें । अस्मितायुक्त, स्वत्व की अनुभूति रखनेवाले, शोषणमुक्त और समतायुक्त समाज का हमें निर्माण करना है । छठे दशक के प्रारंभ में यात्रा के बढ़ते चरण आपके स्नेह, सहयोग एवं सद्भाव से नित नई ऊँचाइयों को मापने में सक्षम होंगे - कल्याण आश्रम परिवार इसी विश्वास के साथ अपने उज्ज्वल भविष्य की ओर निहार रहा है । संगठन कार्य को प्रभावी बनाकर पू. बाला साहब देशपांडे जन्म शताब्दी वर्ष की सार्थकता प्रमाणित करनी है । अभी तक प्राप्त सफलताओं से उत्पन्न विश्वास को लेकर शेष बचे कार्य को शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण करने का संकल्प ही जन्मशताब्दी वर्ष की स्वर्णिम उपलब्धि होगी ।

कहा गया है कि स्वतंत्र रहने का मूल्य है अहर्निश जागरूकता । हमारे देश का कोई भी घटक कमजोर कड़ी नहीं रहना चाहिए । हमारे राष्ट्र की कमजोर कड़ी के रूप में हमारा वनवासी समाज है । उसको हर स्तर पर मजबूत करना, प्रत्येक समझदार और समर्थ नागरिक का कर्तव्य है । वनवासी समाज की आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्थिति सुदृढ़ रहे यह राष्ट्रीय हित के लिये अतीव आवश्यक है । तब हमारा राष्ट्र सुरक्षित और अखण्ड रह पायेगा और नियति के अनुसार चौराहे पर खड़ी मानवता के लिए मार्गदर्शक राष्ट्र के नाते अपनी भूमिका निभाने में सक्षम हो पायेगा ।

सदियों से उपेक्षित यह समाज अब जाग उठे, पुनः तन्द्रा को प्राप्त न करे, यह समय की आवश्यकता है ।

कल्याण आश्रम से सम्पर्क और विविध आयामों के कार्य आयोजन के कारण वनवासी के अन्दर जो उत्साह का निर्माण हुआ है उसे देखते हुए आज शेष समाज को निर्णय लेना है कि एक वन की प्रतिभा को जंगलों में उपेक्षित न छोड़ते हुए हम उसे आगे बढ़ायेंगे । आवश्यक संसाधनों के अभाव के कारण वनवासी पीछे न रह जायें ।

वनवासी समाज को अपना बंधु समझकर अपनाये बगैर राष्ट्रीय भावनात्मक एकता कैसे दृढ़ हो सकती है ? आइये, इस पवित्र एवं राष्ट्रीय कार्य में हम सब तन-मन-धन से सहयोगी बनें ।

■